विज्ञान के नये आयाम

विजय शंकर

© : लेखक
प्रकाशक : आधुनिक प्रकाशन
तेलीवाड़ा, बीकानेर
लेखक : विजय शंकर
संस्करण वर्ष : 1989
मूल्य : 30 रुपये
मुद्रक : वर्धमान एण्टरप्राईजेज, दिल्ली-32

VIGYAN KE NAYE AAYAM Rs. 30 00

अनुक्रम

चित्र

अपना फोटो खिचवाने के लिए सभी उत्सुक रहते हैं। परन्तु यह समझना कि फोटो खींचने की क्रिया किस प्रकार सम्पन्न होती है, कोई कोई ही जानते हैं। कैमरा बहुतों ने देखा होगा तो बहुतों ने केवल नाम ही सुना होगा। इस पर भी अपना फोटो खिंचवाने तथा दूसरे का फोटो खींचने के लिए सभी इच्छुक होते हैं।

कैमरा शब्द कमरे से बना है। इटली भाषा में अंधेरे कमरे को कैमरा ऑब्सक्यूरा कहते हैं। यहीं से कैमरा शब्द चला आरहा है। यहां पर मेलों, तमाशों में एक खेल दिखाया जाता था। एक बन्द तम्बू के अन्दर एक मेज रख कर उस पर एक सफेद कागज बिछा दिया जाता था। तम्बू के ऊपरी भाग में एक ताल लगा रहता था जैसा चित्र (न० १) में दिखाया गया है। ताल मेलों के दृश्य को दर्पण पर केन्द्रित करता है, पुनः दूसरी ताल व दर्पण उन दृश्य को मेज के ऊपर कागज पर बनाता है। फलतः जो कुछ बाहर होता है उसका चित्र जनता पैसे देकर तम्बू में तमाशा

देखती हैं, सबका मनोरंजन होता है।

चित्र नं० १

सन् १६७० ईस्वी में श्री राबर्ट ब्योइल ने इसी आधार पर एक छोटासा बाक्स बनाया। इसकी दीवार में एक नाल लगाया, दूसरी विपरीत दीवार को काट दिया। कटे हुए भाग पर कांच की घिसी हुई पट्टिका लगा दी। बाक्स को भीतर से काला पोत दिया। नाल के सामने के दृश्य का चित्र इस कांच की पट्टिका पर बनता था। देखनेवाला अपने सिर तथा इस कांच की पट्टिका को काले कपड़े से ढक कर इस पर बनते चित्रों को देखता

था। जो दृश्य ताल के सामने होता है, उसको कांच पट्टिका पर बनते देख प्रसन्न होता है। यहीं से वर्तमान कैमरे का जन्म हुआ। आधुनिक काल में अनेकों प्रकार के कैमरे बन गये हैं। इनसे दूर दूर स्थित नक्षत्रों का भी चित्र ले लिया जाता है। कुछ कैमरों से तीव्र गति से भागते हुए जीवों तथा अत्यधिक वेगवान वायुयानों का भी चित्र ले लिया जाता है। रात्रि के अंधेरे में भी बिजली के दीपक से प्रकाश करके चित्र ले लिया जाता है। यदि ताल पर ढक्कन चढ़ा दिया जाय तो ताल में प्रकाश नहीं जा सकता तथा चित्र भी नहीं बनता है। इस प्रकार कैमरे के मुख्य तीन भाग होते हैं, प्रथम ढक्कन, दूसरा ताल और तीसरा कांच पट्टिका। यह तीनों एक बाक्स में लगे रहते हैं। इसी छोटे से कमरे को कैमरा कहते हैं। आप स्वयं एक कैमरा बना सकते हो।

टीन का डिब्बा

चित्र नं० २

एक टीन या चौकोर डिब्बा लो। एक तरफ से काट दो और इसको कांच पट्टिका से बन्द करदो। इसके सामने वाली दीवार के बीच में पिन से एक सूची छिद्र करदो। बस कैमरा बन गया। अब इस कैमरे को इस प्रकार रखो कि

छिद्र सड़क की ओर रहे। कांच पट्टिका पर देखने पर कुछ भी दृश्य नहीं दिखाई देता है। अब कांच पट्टिका तथा अपने सिर को काले कपड़े से ढक लो कि पूर्णतया अंधेरा हो जाय। अब कांच पर देखने पर आते जाते मनुष्यों, तांगों इत्यादि के चित्र दिखाई देते हैं। यह कितना मनोरंजक होता है!

इन छोटे से सूची छिद्र में से कैमरे में न्यून से न्यून प्रकाश प्रवेश करता है, फलतः चित्र फीका बनता है। बाहर अधिक प्रकाश होने के कारण यह फीका चित्र कांच पट्टिका पर दिखाई नहीं पड़ता है। फलतः काला कपड़ा डाल कर बाहर के प्रकाश को रोक देते हैं तो अंधेरे मे यह फीका चित्र साफ दिखाई देने लगता है। ध्यान से देखने पर ज्ञात होगा कि यह सब चित्र उलटे हैं। अब सारा मजा ही किरकिरा हो जाता है कि चित्र उलटे ही नहीं हैं तथा छोटे छोटे भी हैं। परन्तु यह बन किस प्रकार जाते हैं?
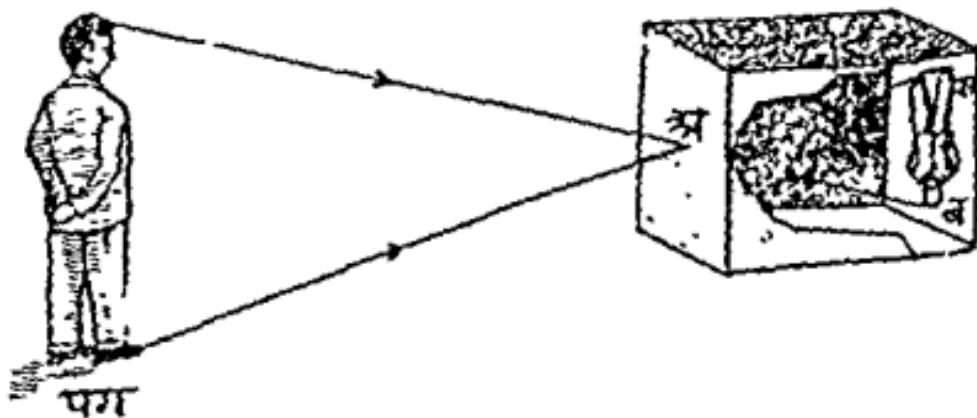
चित्र प्रकाश से बनता है, सिद्धान्त यह है कि प्रकाश की किरणें सरल रेखाओं में गति करती हैं। चित्र से ज्ञात होगा कि सिर से किरण छिद्र 'अ' में से सीधी जाकर कांच पट्टिका के 'ब' स्थान पर पड़ती है। धड़ से किरण छिद्र 'अ' में से सीधी जाकर 'स' स्थान पर पड़ती है। इसी प्रकार अन्य किरणों ने जाकर कांच पट्टिका पर उल्टा चित्र बना दिया।

टीन के डिब्बे

चित्र नं० ४

कुछ बड़े बड़े चित्र बनाने के लिए एक और टीन के डिब्बे की आवश्यकता पड़ती है, एक और छोटा डिब्बा लो। उसके दोनों सिरे की छोटी दीवारों को काट दो पुनः इसको प्रथम के अन्दर सरका दो। इसके बाहरी कटे हुए भाग पर कांच पट्टिका लगा दो। अब सड़क की तरफ देखो। अन्दर वाले डिब्बे को थोड़ा थोड़ा बाहर सरकाओ। अब पट्टिका पर बने चित्र बड़े बड़े हो जाते हैं। चित्र का छोटा बड़ा होना छिद्र तथा पट्टिका की

दूरी पर निर्भर है। इसी प्रकार अपना चित्र भी चित्रकार कैमरे में उतारता है। सिद्धान्त यही है परन्तु क्रिया तथा यंत्र में कुछ भिन्नता है।

चित्रकार के कैमरे में छिद्र के स्थान पर कांच का ताल लगा रहता है। आपने लोगों को चश्मा लगाए देखा है। इन गोल-गोल कांच के टुकड़ों को ताल कहते हैं। इनमें प्रकाश को केन्द्रित करने का गुण होता है। यह छिद्र से बड़ा भी होता है। फलतः ताल में से प्रकाश भी अधिक जाता है तथा केन्द्रित होने के कारण चित्र साफ बनता है। परन्तु सूची छिद्र कैमरे से भी चित्र खींचा जा सकता है केवल सूची-छिद्र अत्यन्त छोटा होना चाहिए, तभी साफ चित्र बनता है। यदि छिद्र बड़ा कर दिया जाय तो प्रकाश तो अवश्य अधिक प्रवेश करेगा परन्तु यह बड़ा छिद्र कई छोटे छोटे छिद्रों के समान होगा फलतः इससे कई चित्र एक दूसरे के ऊपर तथा आसपास बनेंगे तो चित्र साफ न बन कर धुंधला बनेगा और प्रकाश ही प्रकाश रह जायगा तो सब कुछ गड़बड़ हो जायगी। फलतः ताल से ही सफलता प्राप्त होती है। यदि छिद्र अत्यन्त छोटा लें तो कैमरे में प्रकाश अत्यन्त न्यून प्रवेश करेगा और चित्र खिंचवाने वाले को अधिक देर तक स्थिर खड़ा व बैठना पड़ेगा कि पर्याप्त मात्रा में प्रकाश जाकर चित्र खिंच जाय। जीव इतनी देर तक स्थिर एक टक नहीं रह सकते हैं। ज़रा हिले अथवा मक्खी उड़ाई कि वह भी चित्र में खिंच जावेगी तो सब चित्र गड़बड़ हो

जावेगा। फलतः ताल ही सफलता देता है कि कुछ क्षण में ही अधिक प्रकाश प्रवेश कर साफ चित्र बन जाता है।
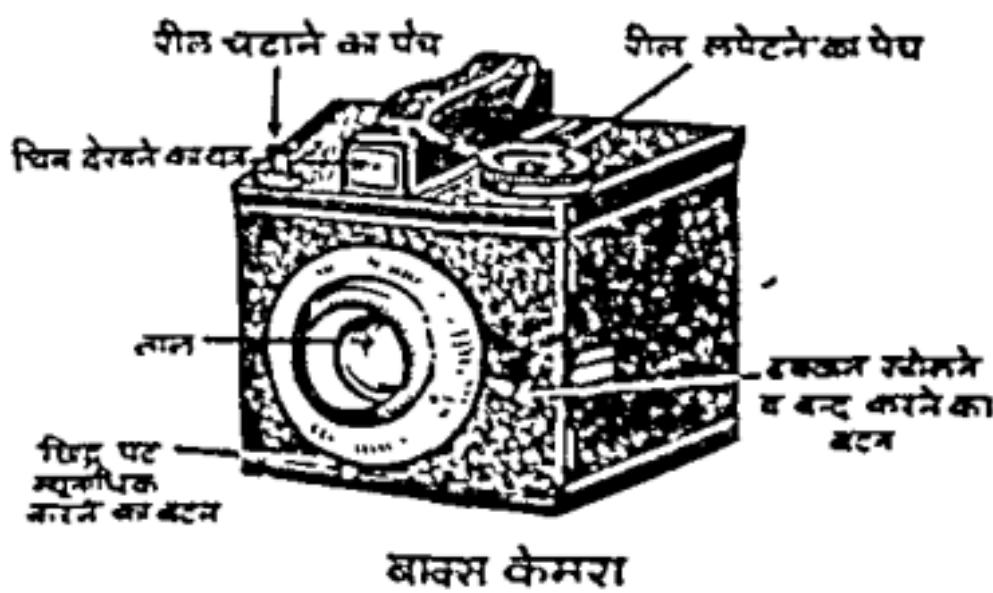
बाक्स केमरा

चित्र नं० ५

कुछ कैमरे उपरोक्त कैमरे के समान होते हैं। इनको बाक्स केमरा कहते हैं, जैसा चित्र में दिखाया गया है। कुछ कैमरों में यह ताल मोमजामें की धौंकनी के मुंह पर लगा रहता है। धौंकनी को आगे पीछे सरका सकते हैं। इसको इकट्ठी करके बन्द भी कर लेते हैं। काम में लेते समय ताल को पकड़ कर खींच कर आगे सरका लेते हैं तो बड़ासा कैमरा बन जाता है। बन्द करने पर छोटा सा बन जाता है इसे तह करने वाला अर्थात् फोल्डिंग कैमरा कहते हैं। इसमें ताल के ऊपर ढक्कन लगा रहता है। धौंकनी के

चौड़े भाग पर चित्र लेने की पट्टिका लगी रहती है। इसमें ताल तथा कांच पट्टिका की दूरी धौंकनी को सरका कर करते हैं।
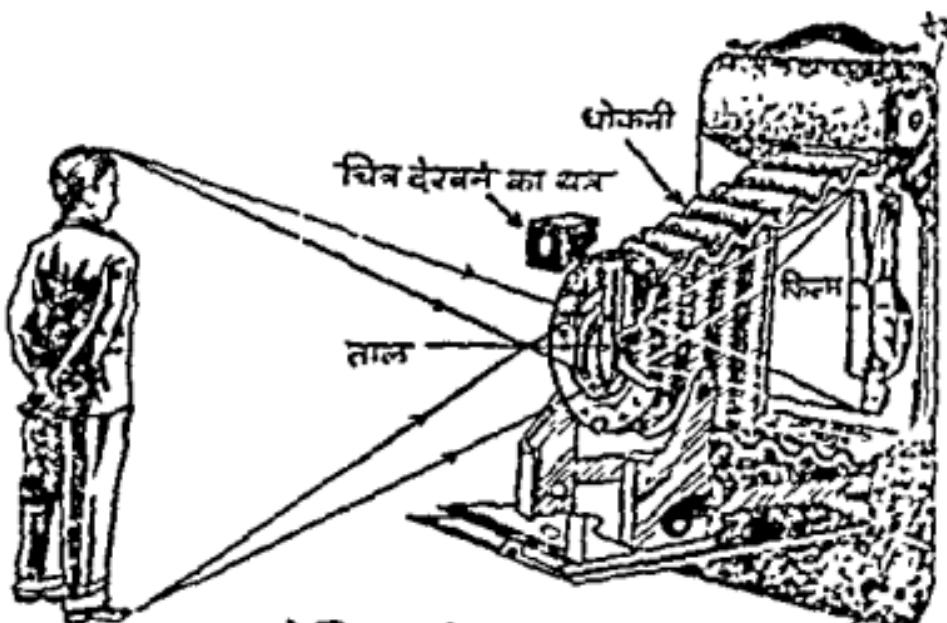
फोल्डिंग केमरा

चित्र नं० ६

सन १७२७ ईस्वी में श्री शुल्ज़े ने एक प्रयोग में सफलता पाई। उन्होंने चांदी के एक रसायनिक सिलवर नाइट्रेट के घोल में एक कागज़ धोल कर अंधेरे में सुखा लिया। एक अन्य कागज़ पर कुछ अक्षर अथवा चित्र काट कर इस धोने हुए कागज़ के ऊपर रख दिया। इसके ऊपर तनिक तीव्र प्रकाश डाल दिया तो कटे हुए भागों में से प्रकाश निकल कर नीचे लेप में रसायनिक परिवर्तन कर देता है तो लेप वाले कागज़ पर उसी प्रकार का चित्र

जाता है। यह चित्र काले रंग का होता है। इसी प्रकार का अपना चित्र भी बनता है।

सर्व प्रथम सन् १८२२ ईस्वी मे श्री निपे ने कांच की इसी प्रकार की पोती हुई कांच पट्टिका पर चित्र खींचने में सफलता प्राप्त की थी। कुछ वर्ष बाद सन् १८३६ में एक साथी के सहयोग से चित्रकारी आरम्भ कर दी थी। फलतः चित्र कांच पट्टिका पर बनाया जाता था। एक पट्टिका से कई चित्र बनाने की क्रिया श्री तालबोट ने आविष्कार की। यह सिद्धान्त आज भी उसी प्रकार चला आरहा है। कांच पट्टिका, कागज़ अथवा फिल्म कोई भी वस्तु उपयोग में लें परन्तु सब पर चांदी के किसी न किसी रसायनिक का लेप रहता है। जो दृश्य ताल के सामने होता है, उसका प्रकाश ताल में से प्रवेश कर कैमरे में बन्द पट्टिका के लेप पर रसायनिक परिवर्तन कर देता है। विभिन्न भागों से प्रकाश समान नहीं आता है क्योंकि कोई भाग हल्का, कोई भाग गहरे रंग का रहता है। फलतः रसायनिक परिवर्तन भी असमान होता है। सफेद भागों से अधिक प्रकाश तथा काले भागों से न्यून प्रकाश आता है। इस कारण पट्टिका के प्रत्येक भाग पर रसायनिक परिवर्तन न्यूनाधिक होता है। यह लेप इस परिवर्तित दशा में जहां का तहां जमा रहता है।

इस पट्टिका तथा कागज़ पर लीपापोती का कार्य अन्धेरे कमरे में किया जाता है। कमरे में केवल एक हल्के लाल रंग का

दीपक प्रकाश करता है कि कार्य सम्पन्न हो जाय, पुनः पेटियों में बन्द कर दिए जाते हैं। जब कार्य में लाना होता है तो अन्धेरे कमरे में सावधानी से खोल कर कैमरे में चढ़ा लेते हैं। सर्वसाधारण में पट्टिका व फिल्म दोनों काम में आते हैं। फिल्म के दोनों सिरों पर काले कागज की लम्बी पट्टियां जुड़ी रहती हैं। इसे प्रकाश में भी खोल कर कैमरे में चढ़ा लेते हैं। फिर कैमरा बन्द कर देते हैं। पेंच को घुमा कर काले कागज को लपेट देते हैं तो रसायनिक लेप वाला भाग ताल के सामने आ जाता है। ताल पर ढक्कन चढ़ा रहता है। यह ढक्कन हाथ अथवा कमानी को दबा कर खोल सकते हैं। जितनी देर ढक्कन खुला रहेगा उतनी ही देर प्रकाश ताल में से कैमरे के अन्दर प्रवेश कर सकता है। पुनः ढक्कन बन्द कर देते हैं। कुछ कैमरों में यह ढक्कन एक सेकिन्ड के १/२५, १/५०, १/६०, १/१०० अन्शों तक भी कमानी से खोला जाता है। कमानी को छोड़ देने पर ढक्कन स्वतः बन्द हो जाता है। इन कैमरों से चलते, भागते जीवों, घुड़दौड़, रेल गाड़ी अथवा वायुयानों के भी चित्र लिए जाते हैं। न्यून से न्यून प्रकाश इस लेप पर अपना प्रभाव क्षण भर में कर जाता है।

चित्रकार ढक्कन हटा कर कैमरे पर काला कपड़ा डाल कर साधारण कांच पट्टिका लगा कर चित्र ठीक करता है। पुनः धौंकनी को आगे पीछे सरका कर देखता है कि सब चित्र पट्टिका पर समान ठीक ठीक बने हैं। अब इस साधारण पट्टिका

को निकाल लेता है। उसके स्थान पर चौखटे में बन्द लेप वाली पट्टिका कैमरे में लगा देता है। ताल पर ढक्कन लगा देता है। पुनः चौखटा खींच लेता है तो पट्टिका का लेप वाला भाग ताल के सामने खुल जाता है। परन्तु अधिकतर कैमरों में चित्र ठीक करने वाला यन्त्र लगा होता है। यह ताल के ऊपर लगा होता है। फिल्म खुली रहती है परन्तु ढक्कन बन्द रहता है। जब किसी का चित्र खींचना होता है तो चित्र देखने वाले यन्त्र में देख कर ताल को आगे पीछे सरका कर अथवा कैमरे को आगे पीछे सरका कर चित्र ठीक कर लेते हैं। तब चित्रकार कहता है कि 'कृपया सावधान'। पुनः ढक्कन को हाथ व कमानी से बटन दबाकर खोल देता है। जो दृश्य सामने होता है, उसका प्रकाश ताल में से जाकर फिल्म के लेप पर अपना काम कर देता है। यदि अब इस पट्टिका को अन्धेरे में देखें तो उस पर कुछ प्रतीत नहीं होगा, क्योंकि यह रसायनिक परिवर्तन न्यूनतम होता है। इसको डेवलपर तथा हाइपो के घोलों में पृथक पृथक धोकर साफ कर लेते हैं तो चित्र पर का अपरिवर्तित लेप धुल जाता है और परिवर्तित लेप जम जाता है। इसे साफ पानी में धोकर अब प्रकाश में लाने पर कोई हानि नहीं होती है। इस फिल्म या पट्टिका को निपट्ट कहते हैं। इससे अनेकों चित्र बनाये जाते हैं। इस निपट्ट (नेगेटिव) से कागज़ पर चित्र बनता है।

इस निपट्ट के नीचे उसी प्रकार का लेप वाला काग[illegible] रख कर चौखटे में कस देते हैं। यह अन्धेरे कमरे में करते हैं। [illegible] [illegible]

प्रकाशित विद्युत् दीपक से निपट्ट के सामने प्रकाश डालते हैं। य
प्रकाश निपट्ट में से प्रवेश कर लेप पर रसायनिक परिवर्तन क
देता है। इस कागज़ को चौखटे (फ्रेम) में से निकाल कर उभार
(डेवलपर) तथा हाइपो के घोलों में धो साफ़ कर सुखा लेते
हैं। यह निपट्ट से बना है इस कारण इस पर उलटा चित्र
बना अर्थात् इस पर आपका चित्र सीधा बन गया। यही चित्र
आपको भेंट कर देता है।
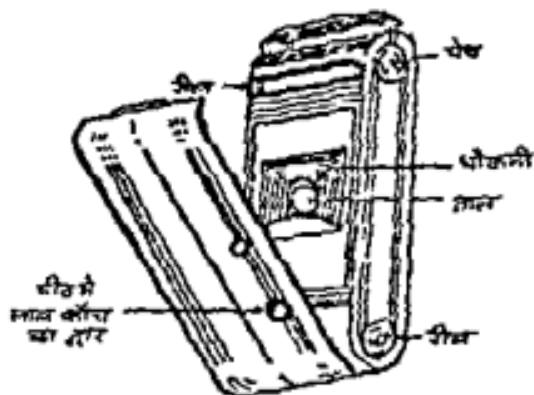
फोल्डिंग कैमरे का पृष्ठ-भाग

एक पट्टिका व फिल्म पर एक ही चित्र उतारा जाता है। परन्तु
अब फिल्म की रील लम्बी लम्बी आती है। यह सेल्लाइड की
बनी होती है। यह इतनी लम्बी भी होती है कि इन पर ८-१२-१६
चित्र खिंच सकते हैं। इनके दोनों सिरों पर काले कागज की पट्टी

जुड़ी रहती है। प्रकाश में ही इस काली पट्टी को खोल कर कैमरे में रील चढ़ा देते हैं। रील पेच से लपेट दी जाती है। कैमरे के पृष्ट भाग में एक छोटी सी लाल कांच से बन्द खिड़की होती है। रील लपेटते जाते हैं जब इस खिडकी में नं० १ आ जाता है तो रुक जाते हैं। इस का अर्थ यह है कि अब ताल के सामने एक चित्र लेने लायक फिल्म आ गई है। अब चित्र खींच लेते है। पुनः पेच घुमा कर फिल्म को रील पर लपेट देते हैं। तो नं० २ आ जाता है। अब दूसरा चित्र खींच सकते है। इसी प्रकार रील लपेट कर अन्य चित्र लेते हैं। जब पूरी फिल्म काम में आजाती है तो उस के बाद काली पट्टी रह जाती है। इसे भी लपेट देते हैं तो सब चित्र सुरक्षित लिपट जाते हैं। अब कैमरा खोल कर रील निकाल लेते हैं। अन्धेरे कमरे में धो कर सुखा लेते हैं। इस पर ८, १२, २४ निपट्ट बने होते हैं। इन से चित्र कागज पर बना लेते हैं। यह निपट्ट ही अधिक महत्व का है। मनुष्य के जिस भाग से प्रकाश न्यून आता है पट्टिका के लेप पर परिवर्तन न्यून होता है। जब धोते हैं तो उन भागों का लेप खूब धुल जाता है, अन्य भागों पर न्यूनाधिक प्रभाव रहता हैं। फलतः जो मनुष्य अथवा दृश्य के भाग काले रहते हैं, वह निपट्ट पर साफ दिखते हैं जो भाग साफ होते हैं उन भागों पर निपट्ट काला रह जाता है। फलतः निपट्ट का रंग पात्र व दृश्य के रंग का विपरीत होता है। इसी कारण इसे निपट्ट कहते है।
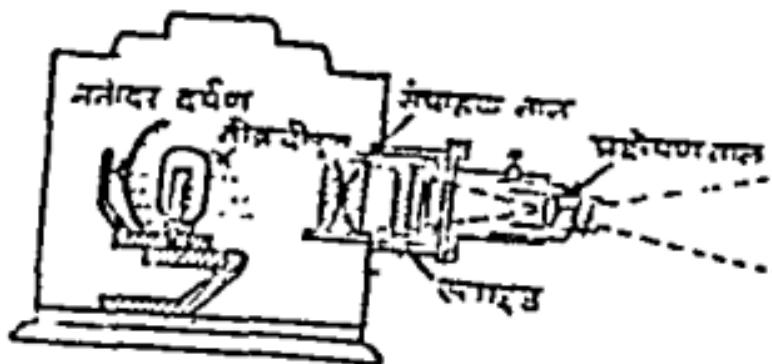
मैजिक लालटेन

जब चित्र खींचने की क्रिया सफल हो गई तो वैज्ञानिकों को इन्हीं चित्रों को पर्दे पर फेंकने की सूझी। यह कार्य कैमरे के विपरीत है। इसके लिए एक सरल यन्त्र का निर्माण हुआ। इस यन्त्र को मैजिक लालटेन कहते हैं।

यह यन्त्र एक बावस में बन्द होता है जैसे ऊपर चित्र दिखाया गया है। इस में एक नतोदर दर्पण के सामने एक ती विद्युत् दीपक होता है। यह दर्पण दीपक प्रकाश को पुनः दाहिन ओर परावर्तित कर अधिक तीव्र बना देता है। इनके बाद एव संग्राहक ताल है जो दीपक प्रकाश को चित्र पट्टिका अर्थात स्लाइड पर केन्द्रित कर देता है। यह स्लाइड एक चौखटे में उलटी रखी जाती है। इस चौखटे में दो खाने होते हैं जिनमें एक एक स्लाइड रखते हैं। चौखटे को इधर उधर सरका कर एक स्लाइड

को संग्राहक ताल के सामने कर देते हैं। इसमें से प्रकाश किरणें निकल कर आगे जाकर चित्रपट अर्थात् पर्दे पर चित्र बनाती हैं। क्योंकि चित्रपट दूर होता है कि चित्र बड़ा बने तो सब को साफ दिखाई पड़े, इस कारण एक अन्य प्रक्षेपण ताल चित्र को चित्रपट पर केन्द्रित करता है। इस प्रक्षेपण ताल को आगे पीछे सरका कर चित्र साफ व ठीक कर लेते हैं।

आजकल सिनेमा फिल्म आरम्भ होने से प्रथम कई प्रकार के विज्ञापन दिखाये जाते हैं। जो सज्जन अपने माल का विज्ञापन करना चाहते हैं वह अपने नाम व माल की स्लाइड बनवा लेते हैं। कुछ फीस लेकर सिनेमा वाले इस स्लाईड का अपने सिनेमा घरों में विज्ञापन कर देते हैं। यह स्लाइड फिल्म आरम्भ से प्रथम तथा मध्यान्तर के पश्चात भी दिखाते हैं। यह स्लाइड केवल कांच पट्टिका अथवा सेलूलाइड पट्टिका पर ही बनती हैं क्योंकि यह पारदर्शक होती हैं। परन्तु इस यंत्र से पुस्तक आदि में बने चित्र पर्दे पर नहीं फेंके जा सकते हैं, इस कारण उपरोक्त यंत्र में कुछ सुधार किया गया। इस यंत्र को एपीडायस्कोप कहते हैं। यह मैजिक लालटेन का काम भी करता है तथा इससे पुस्तक आदि में बने चित्र भी पर्दे पर फेंके जा सकते हैं, इसलिए इस यंत्र के पेंदे में एक द्वार होता है। इसको खोल कर इस पर पुस्तक खोल कर रख देते हैं और द्वार बन्द कर देते हैं तो पुस्तक उसमें जमी रहती है।
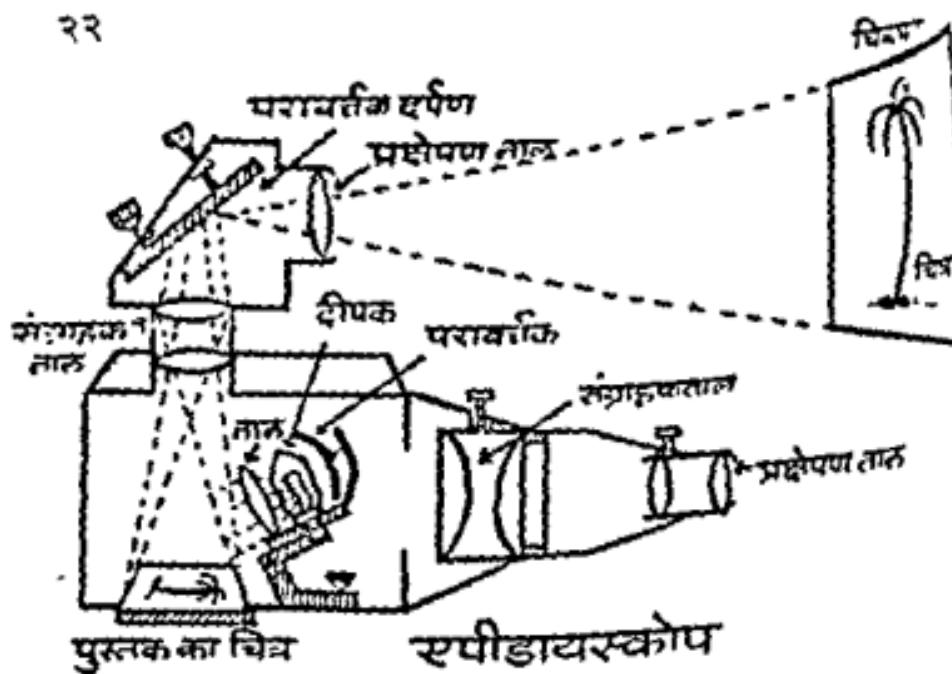
इस यंत्र में दीपक तथा परावर्तक दर्पण एक संग्राहक ताल के साथ एक पट्ट पर लगे होते हैं। इस पट्ट को दायें बायें घुमा सकते हैं। जब स्लाइड दिखाना होता है तो इस पट्ट को बायें घुमा देते हैं तो नीचे वाला यंत्र भाग काम में आता है। जैसा मैजिक लालटेन में उपरोक्त वर्णित है। जब पुस्तक आदि का चित्र दिखाना होता है तो इस पट्ट को दायें घुमा देते है तो स्लाइड वाला भाग बन्द हो जाता है, जैसा चित्र में दिखाया गया है। प्रकाश अब पुस्तक पर केन्द्रित होता है तथा परावर्तित होकर सीधा ऊपर जाता है। इसको संग्राहक ताल परावर्तक दर्पण पर केन्द्रित कर देता है। यहां से प्रकाश परावर्तित होकर चित्रपट पर चित्र बना देता है। प्रक्षेपण

ताल को आगे पीछे सरका कर चित्र को पर्दे पर साफ ठीक कर लेते हैं।

पुस्तक के स्थान पर कोई साकार वस्तु जैसे कोई खिलौना व तथा आम अथवा नारंगी भी रख सकते हैं। रंगीन वस्तु का चित्र रंगीन बनता [illegible] से व्याख्यान देते समय चित्र दिखा कर समझाने में सरलता रहती है और समझ में जल्दी आता है। इस के पश्चात चल-चित्र का जन्म हुआ जो अगले पाठ में वर्णित है।

चल चित्र

जब चित्र पट्टी पर कई चित्र उतारना संभव हो गया तो चल चित्र का जन्म हुआ। चल-चित्र अर्थात् सिनेमा की चित्र पट्टी भी साधारण चित्र पट्टी के समान होती है, यह चल-चित्र पट्टी अर्थात् फिल्म लम्बी अधिक होती है तथा चौड़ी कम। इस पर भी एक चित्र के पश्चात दूसरा चित्र बना रहता है। यह फिल्म १००० फीट तथा विभिन्न लम्बाई की होती हैं। फलतः चल-चित्र पट्टी प्रथम बनाई जाती है पुनः सिनेमा दिखाया जाता है। इस फिल्म को बनाने का कैमरा कुछ भिन्न होता हैं, परन्तु सिद्धान्त एक ही है। दोनों में चित्र एक ही रीति से खींचे जाते हैं। भेद केवल इतना है कि साधारण कैमरे में जब फोटो लेते हैं तो ढक्कन हाथ अथवा बटन दबाकर कमानी से खोलते हैं और फिल्म को भी हाथ से पेंच घुमा कर लपेट देते हैं पुनः दूसरा चित्र लेते हैं, परन्तु चल-चित्र कैमरे में ढक्कन यंत्र से स्वतः खुलता तथा बन्द होता है। यह यंत्र ही फिल्म को भी खींच कर स्वयं लपेटता जाता है केवल बटन दबाना पड़ता है। ढक्कन एक सेकिन्ड में २४ बार खुलकर बन्द होता है। जिस क्षण ढक्कन बन्द होता उसी क्षण यंत्र से फिल्म आगे खिंचकर रील पर लिपट जाती है और फिल्म का नया भाग

ढक्कन के सामने आ जाता है। दूसरे क्षण जब ढक्कन खुलता है, तो इस नये भाग पर दूसरा नया चित्र खिंच जाता है।

मुवी कैमरा
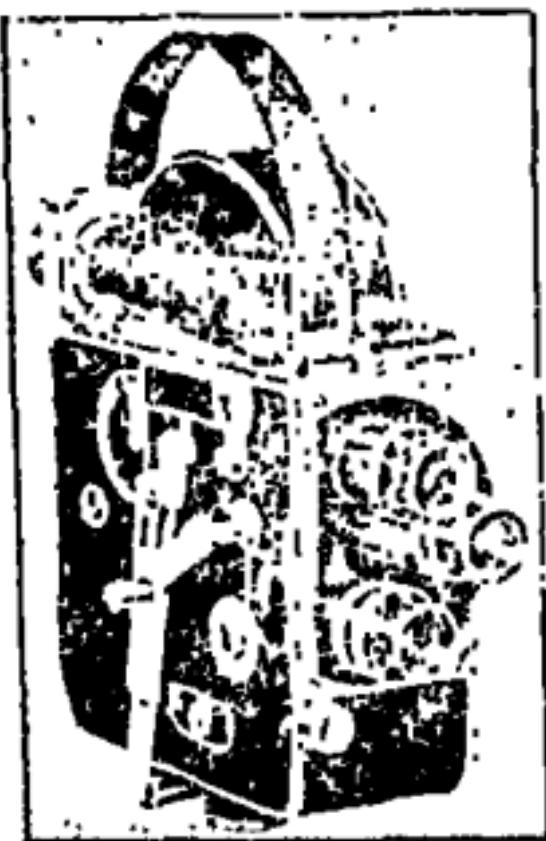
ऊपर चित्र में चल-चित्र खींचने का कैमरा दिखाया गया है। इस के सामने तीन ताल लगे हैं। यह विभिन्न दूरी के लिए होते हैं। जितनी दूरी से चित्र लिया जाता है उसी प्रकार का

ताल काम में ले आते हैं। यह तीनों ताल एक पहिये पर लगे रहते हैं जो अपने केन्द्र पर घूमता है। फलतः इसे घुमाकर जिस ताल को काम में लाना होता है उसे कैमरे के ढक्कन के सामने कर लेते हैं। इसमें फिल्म भी साधारण फोल्डिंग कैमरे के समान दो रीलों पर लिपटी रहती है परन्तु यंत्र से स्वयं खिंचती जाती तथा एक रील में से खुलती जाती और दूसरी रील पर लिपटती जाती है। ढक्कन के पीछे द्वार होता है। इसके पास से सटकर फिल्म जाती है। ढक्कन भी यन्त्र से स्वयं खुलता बन्द होता है। फलतः इस कैमरे में सब काम स्वतः यन्त्रों से होता जाता है। फिल्म खींचने के लिए समान छिद्र वाले दांतेदार पहिए रहते हैं तथा फिल्म के दोनों किनारों पर इसी प्रकार के समान दूरी के छिद्र होते हैं। फिल्म इन दांतों में फंसी रहती है कि स्वतः खिसकती जाती है। इस कैमरे के भी पीछे के भाग में चित्र देखने का यन्त्र रहता है। जब चित्र खींचते हैं तो इस में से दृश्य को देखते जाते हैं कि चित्र ठीक ठीक दिखाई देता है और बटन दबाकर खींचते जाते हैं।

मानलो आप आदर कुर्सी पर बैठे और पुस्तक उठाकर पढ़ने लगे इतने में १५ सेकिंड लगे तो इन १५ सेकिंड में आपके २४ × १५ = ३६० चित्र खिंच गये। यदि आपके एक चित्र ने आधा इंच ही स्थान घेरा हो १८० इंच लम्बी फिल्म काम में आएँ। यह सब कार्य अर्थात् ढक्कन का घूमना तथा बन्द होना, फिल्म का खिंचना और रील पर लिपटना स्वतः यन्त्रों से हो जाता है

केवल बटन दबाना पड़ता है। यही इस कैमरे की विशेषता है। इसमें फोकसिङ्ग नहीं होता है परन्तु धारण भी होता है। फलतः १५ सेकिन्ड में आप की प्रत्येक क्रिया के ३६० चित्र उतर गये परन्तु आप को कुछ ज्ञान नहीं हुआ। इस फिल्म को भी साधारण फिल्म फोटो के समान ही डेवलपर में धोकर पुनः हाइपो में जमा कर स्वच्छ जल में धोकर साफ कर लेते हैं, जैसा प्रथम पाठ में बताया गया है।

इन चल-चित्र फिल्मों के बनाने में खर्च अधिक होता है तथा समय भी अधिक लगता है क्योंकि विभिन्न दृश्यों के चित्र लेने पड़ते हैं। यह पट्टी लम्बी तो बहुत होती है परन्तु चौड़ी कम होती है। प्रायः तीन प्रकार की चौड़ाई की होती है, १६ मिलीमीटर, ३५ मिलीमीटर तथा ७० मिलीमीटर परन्तु अब विदेशों में इससे भी न्यूनाधिक चौड़ाई की भी बनने लगी है। इन पट्टियों को प्रकाश में देखो तो इन पर एक चित्र के पश्चात् दूसरा चित्र सटा हुआ बना होता है, परन्तु प्रत्येक चित्र भिन्न व पृथक होता है। यह ही चित्र एक के बाद एक सिनेमा के पर्दे पर बनते रहते हैं। जिस प्रकार १५ सेकिन्ड में ३६० चित्र उतारे थे इसी प्रकार १५ सेकिन्ड में ३६० चित्र पर्दे पर पड़ते रहते हैं अर्थात् १ सेकिन्ड में २४ चित्र पर्दे पर पड़ते रहते हैं। इस कारण इस हिसाब से उतारे जाते हैं। इसका कारण प्रकृति का एक अद्भुत नियम है।

यदि आप किसी वस्तु को देखें और आंख बन्द करने के

कुछ क्षण आंखों में कुर्सी ही दिखाई पड़ती है। यह ही भेद चल-चित्र का है। कारण यह है कि आप जिस वस्तु को देखते हैं उसका चित्र आंख में बनता है और यदि वह वस्तु आप की आंख से ओझल भी हो जाय तब भी उसका चित्र कुछ क्षण पश्चात् तक भी आप की आंख में बना रहता है। वस्तु के ओझल होते ही उसका चित्र आंख से नष्ट नहीं हो जाता है। यह केवल क्षणिक ही रहता है। यह झूंठा चित्र वस्तु के अदृश्य होने के पश्चात् भी १/१४ सेकिन्ड तक आँख में बना रहता है। नेत्र के इस गुण को दृष्टि हठ कहते हैं।

एक गेंद को रस्सी से बांध कर हाथ से घुमाओ तो गेंद का एक चक्रसा बन जाता है। जब घूमने की गति न्यून होती है तो गेंद चक्र में घूमती हुई दिखाई पड़ती है। गति तीव्र करने पर गेंद दिखाई नहीं देती है, परन्तु ऐसा प्रतीत होता है कि गेंदों का एक चक्र ही है। कारण यह है कि जब गेंद एक स्थान से दूसरे स्थान पर घूमकर जाती है तब तक दृष्टि-हठ के कारण प्रथम स्थान का चित्र आंख में बना था कि दूसरे स्थान का चित्र भी आकर बन गया। फलतः आंख से चित्र ओझल नहीं होता कि दूसरा बन जाता है। इस कारण स्थान स्थान पर गेंद न दिखाई पड़ कर प्रत्येक क्षण गेंद ही गेंद आंख में बनी रहती है, अर्थात् गेंद का अमिट चक्रसा बन जाता है। यह ही दशा चलचित्र की है। अर्थात् फिल्म पर बने २४ चित्र प्रति सेकिन्ड पर्दे पर पड़ते हैं। अर्थात्

एक के पश्चात् दूसरा चित्र पर्दे पर बनता रहता है फलतः प्रथम चित्र आंख में था ही कि दूसरा और आकर बन गया अर्थात् दृष्टि-दृष्ठ के कारण सब चित्र क्रमबद्ध एक दृश्यसा दिखाई पड़ता है तथा पृथक पृथक चित्र प्रतीत नहीं होते हैं। यह सिनेमा का भेद है। यह चित्र पर्दे पर किस प्रकार डाले जाते हैं सरल बात है।

एक साधारण खिड़की के कांच की एक पट्टिका लो। इस पर स्याही से कुछ लिख अथवा चित्र बना दो। इसको दीवार के पास रख दो और सामने से दीपक का प्रकाश इस पर डालो तो आप देखेंगे कि जो कुछ कांच पर बना है उसका चित्र दीवार पर बन गया है। यह ही चल-चित्र में होता है। चलचित्र का दीपक अत्यन्त तीव्र होता है क्योंकि प्रकाश दूर पर्दे पर डालना होता है। फिल्म सेलूलाइड की बनी होती है। इस पर चित्र बने रहते हैं। यह कांच के समान पारदर्शक होती है। इसमें से दीपक का प्रकाश निकल कर पर्दे पर पड़ता है फलतः जो चित्र इस पर बने होते हैं वह पर्दे पर बनते हैं। सिनेमा का पर्दा दूर होता है। इस कारण प्रकाश फेंकने के लिए एक ताल काम में आता है। यह ताल प्रकाश को पर्दे पर केन्द्रित कर साफ ठीक चित्र बना देता है।

यह कार्य सब यंत्रों से होता है। चल-चित्र पट्टी के दोनों किनारों पर सम दूरी पर समान छेद होते हैं। यंत्र में इसी समान

मूक चल-चित्र प्रक्षेपक
रील
दांतेदार पहिये
त
फ
दी
द
त
रील
चित्र पट
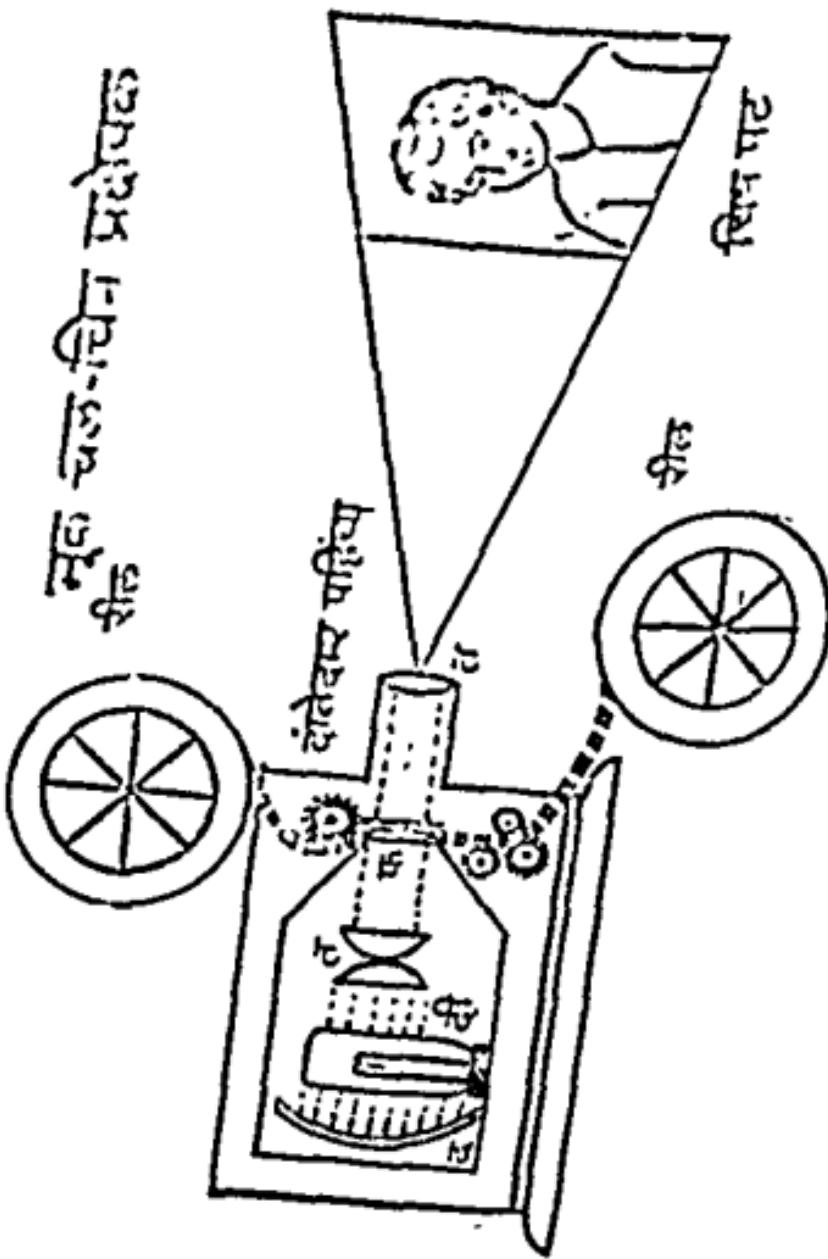
दूरी पर दांतेदार पहिये होते हैं। फिल्म एक रील अर्थात चरखी पर लिपटी रहती है। यह चरखी एक पहिए पर चढ़ा दी जाती है। यह यंत्र से घूमती है। इस फिल्म का दूसरा सिरा एक दूसरे दांतेदार पहियेवाली चरखी पर खींच कर लपेट देते हैं। चित्र में देखिये। दोनों पहिए एक ही यंत्र से घूमते हैं, और फिल्म को चरखी पर लपेटते जाते हैं। यह फिल्म एक द्वार 'फ' के सामने से से हो कर जाती है, इस द्वार पर ढक्कन रहता है। जब यह दांतेदार पहिया घूमता है तो फिल्म खिंच कर आगे सरक जाती है और चरखी अर्थात रील पर लिपट जाती है। चित्र में तीव्र विद्युत् दीपक 'दी' है। इसके बायें पर परावर्त्तक दर्पण 'द' है जो प्रकाश को दायें परावर्तित करके तीव्र कर देता है। इस तीव्र प्रकाश को संग्राहक ताल 'त' चित्र पट्टी पर केन्द्रित करता है। जब द्वार 'फ' खुलता है तो प्रकाश फिल्म में से होकर पर्दे पर चित्र बना देता है। प्रकाश को पर्दे पर केन्द्रित करने के लिए 'त' एक और प्रक्षेपण ताल होता है। इसको आगे पीछे करके पर्दे पर चित्र साफ व ठीक कर लेते हैं।

द्वार की चौड़ाई व ऊंचाई फिल्म पर बने चित्रों के समान होती है फलतः जो चित्र द्वार के सामने आता है उसी का चित्र ताल में से जाकर पर्दे पर बन जाता है। द्वार का ढक्कन तीव्रता से खुलता तथा बन्द होता रहता है। जब ढक्कन खुलता है तो चित्र ार के सामने आ जाता है और इस फिल्म पर बने चित्र का चित्र

पर्दे पर बन जाता है, पुनः ढक्कन बन्द हो जाता है। उसी क्षण दांतेदार पहिया फिल्म को खींच कर आगे सरका देता है तथा खिंची हुई पट्टी रील पर लिपट जाती है तथा दूसरा नया चित्र द्वार के सामने आता है। उसी क्षण ढक्कन स्वतः खुल जाता है तो दूसरा चित्र पर्दे पर पड़ जाता है। पुनः ढक्कन बन्द हो जाता है। इसी प्रकार ढक्कन २४ बार प्रति सेकिन्ड खुलकर बन्द होता रहता है। फलतः चित्र पर चित्र क्रमानुसार तथा क्रमबद्ध पर्दे पर पड़ते रहते हैं। अर्थ यह हुआ कि यन्त्र रुक रुक कर चलता है। जब ढक्कन बन्द होता है तो फिल्म सरक कर लिपट जाती है और जब फिल्म रुकती है तो ढक्कन खुलता है। यह क्रिया क्रमशः होती रहती है और दृष्टि-हठ के कारण एक क्रमबद्ध दृश्य दिखाई देता रहता है। यह ही सिनेमा का सरल तथा मनोरंजक भेद है।

सन् १८२४ में श्री राजेट ने इंगलैंड में इस दृष्टि हठ पर वैज्ञानिक चर्चा की थी। उसी समय एक यन्त्र बना जिसमें ढोल के अन्दर कुछ चित्र चिपका दिये जाते थे। यह सब चित्र एक ही दृश्य के क्रमानुसार अंश होते थे। इस ढोल में पतली पतली धारियां कटी रहती थीं। जब यह ढोल तीव्रता से घुमाया जाता था तो धारियों में से देखने पर चल-चित्र सा प्रतीत होता था।

सन् १८६० में श्री सेलर्स ने अमेरिका में ढोल के स्थान पर आरेदार पहिया बनाया। इसका नाम काइनोमेटोस्कोप रखा। सन् १८७० में श्री हेनरी हेयल ने जनता के मनोरंजन हेतु सर्व प्रथम

चल-चित्र यंत्र का निर्माण किया। इसका नाम फैज़मैट्रोप रखा इसके बाद श्रीईस्टमैन ने सेलूलाइड की पट्टी काम में ली जिस से अनेकों कठिनाइयां दूर हो गईं। इससे उत्साहित होकर श्री एडिसन ने अपना चल-चित्र यंत्र काइनेटोस्कोप बनाया। यह ही प्रथम यंत्र

था जिसने सफलता प्राप्त की। श्री लुमी ने एक ठीक यंत्र व्यापारिक रीति के उपयोग का बनाया। यह ही सच्चा चल-चित्र यंत्र कहा जा सकता है। यह चित्र भी खींचता था पुनः पर्दे पर भी चित्र बनाता था। इंगलैंड में सर्व प्रथम डर्बी घुड़दौड़ का चल-चित्र बना।

ध्वनि

सितार अथवा वीणा के तार को कुछ दबा कर छोड़ दो तो उसमें से ध्वनि उत्पन्न होती सुनाई पड़ती है। ध्यान से देखने पर तार अगल बगल कम्पन करता दिखाई पड़ता है। सायकिल की घण्टी बजाओ तो ध्वनि उत्पन्न होती है। बजती घण्टी को अपनी उंगली से हल्का स्पर्श करने पर आपको घण्टी के कम्पन अनुभव होंगे। तनिक दबा देने से कम्पन रुक जाते हैं तथा ध्वनि भी बन्द हो जाती है। तबले के पर्दे पर रेत की हलकी परत बिछा दो इसके किनारे पर उंगली से चोट मारो तो देखोगे कि रेत कण उछल रहे हैं, कारण यह है कि तबले का पर्दा कम्पन कर रहा है। फलतः सिद्ध होता है कि ध्वनि कम्पन से उत्पन्न होती है। यह कम्पन वायु में कम्पन अर्थात् तरंगें उत्पन्न करते हैं जो आपके कान के पर्दे पर जाकर उसमें कम्पन करते हैं तो आपको ध्वनि सुनाई पड़ती है। एक सेकिंड में जितनी बार वस्तु कम्पन करती है उस संख्या को उस ध्वनि का कम्पनांक अर्थात् फ्रीक्वन्सी कहते हैं। हमारे कान २० कम्पनांक से २०,००० कम्पनांक प्रति सेकिंड की ध्वनि को ही सुन सकते हैं, अन्यथा नहीं। यह भी ईश्वरीय लीला है। यह

कम्पनांक संख्या व्यक्ति पर निर्भर है तथा आयु के साथ न्यूनाधिक होती रहती है। फलतः कई वैज्ञानिकों ने भरसक प्र किये कि ध्वनि को किसी प्रकार चित्र के समान अंकित कर अमेरिका के प्रसिद्ध आविष्कारक एडिसन को सन १८७७ में सफलता प्राप्त हुई। उन्होंने ध्वनि अंकित करने तथा पुनः उ करने का सर्व प्रथम यन्त्र बनाया। इससे हमारे ग्रामोफोन जन्म हुआ। ध्वनि अंकित करने के यन्त्र को फोनोग्राफ तथा पु ध्वनि उत्पन्न करने वाले यन्त्र को ग्रामोफोन कहते हैं। फोनोग्रा से ध्वनि अंकित की जाती है। यह यन्त्र यांत्रिक अथवा विद्यु चालित होता है

फोनोग्राफ के दो मुख्य भाग होते हैं, एक भोंपू, हार्न, अथवा तुरही दूसरा मोम का बेलन अथवा [illegible]। भोंपू के मुख्य तीन भाग होते हैं, जैसा चित्र में दिखाया गया है। [illegible] नोन को भोंपू कहते हैं। इसके [illegible]

बोलता है, इसके संकुचित भाग पर कंपक यानी मोइस का एक पतला पतरा जिसको डायफ्राम अथवा तनुपट कहते हैं, लगी रहती है। गानेवाले के मुख से वायु कम्पन इस तनुपट पर पड़ कर इसमें भी कम्पन उत्पन्न कर देता है। इस तनुपट के मध्य में एक तीक्ष्ण सुई पेंच से लगी रहती है। यह सुई एक कठोर मोम के बेलन पर रख देते हैं इस बेलन को चाबी वाले यन्त्र से घुमाते हैं। यह बेलन एक पेंच पर घूमता है अतः यह घूमता भी जाता है तथा आगे भी बढ़ता जाता है। तीक्ष्ण सुई इस बेलन पर एक कूट या खांचे अर्थात् रेखाएं काटती जाती है। गाने अथवा वक्ता के गीत व भाषण के कम्पन तनुपट में समान कम्पन उत्पन्न करते हैं इस तनुपट के न्यूनाधिक कम्पनों से यह रेखाएं गहरी व उथली बनती जाती हैं। इस प्रकार ध्वनि बेलन पर रेखाओं में अंकित हो जाती है। यदि अब पुनः इसी सुई को उठा कर बेलन पर प्रारम्भिक स्थान पर रख दें और इसको घुमाने दें तो सुई भी इन उथली गहरी रेखाओं में ऊपर नीचे उठती गिरती रहेगी तो इसी प्रकार तनुपट भी कम्पन करने लगेगा, फलतः इन कम्पनों से वायु में भी ग्रोथ के अन्दर यह कम्पन उत्पन्न होंगे और उसी प्रकार का गाना व भाषण सुनाई देगा। इस ढंग के अतिरिक्त बेलने की रेखाएं बनाते हैं परन्तु यह रेखाएं बेलनाकार नहीं बनते हैं। अब तवा अथवा चकरी के समान रेखाएं बनाते हैं। सुई ऊपर नीचे कम्पन न करके अगल बगल कम्पन करती है जिससे रेखाएं एक समान गहराई की सर्प के आकार की टेढ़ी बनती हैं। रेखाएं कुण्डल व चक्र के

समान घूमता है। सुई रेकार्ड के बाहरी भाग पर रखते हैं और घूमती हुई अन्दर की तरफ जाती है। रेकार्ड पर एक इंच की दूरी में ८४ सर्पिल छल्ले के आकार की रेखायें अंकित होती हैं।

इस मोम के रेकार्ड पर ग्रेफाइट का अत्यन्त बारीक चूर्ण छिड़क कर इस पर विद्युत कलई द्वारा तांबे का एक परत जमा लेते हैं : अब मोम को कुछ गर्म करके हटा देते हैं। इस तांबे के परत पर इस्पात की पतली कठोर चादर लगा कर दृढ़ बना लेते हैं। इस रेकार्ड को मास्टर रेकार्ड कहते हैं। इससे अनेकों प्रतिलिपि रेकार्ड बना लेते हैं। यह ग्रामोफोन रेकार्ड काले तवे के समान होता है। यह चपड़ी लाख, कपड़े के बारीक तंतु, काजल इत्यादि मिलाकर बनाई मिश्रण को वल्कनाइट कहते हैं। यह गर्म दशा में नरम होता है परन्तु ठंढी होने पर कठोर रेकार्ड बन जाता है। इस वल्कनाइट के तवे पर मास्टर रेकार्ड को कुछ गर्म कर मशीन से दबा देते हैं तो इस पर सर्पिल छल्लेदार रेखा बन जाती है। इन तवे पर दोनों तरफ दो भिन्न भिन्न मास्टर रेकार्ड दबाने से तवे के दोनों तरफ रेकार्ड बन जाते हैं। इस प्रकार सैकड़ों रेकार्ड उसी गाने अथवा भाषण के बना लेते हैं। इस रेकार्ड को ग्रामोफोन पर रख कर घुमाते हैं और गाना सुनते हैं। फलतः ग्रामोफोन से रेकार्ड से ध्वनि उत्पन्न की जाती है। ग्रामोफोन इसलिए फोनोग्राफ का विपरीत यंत्र है।

ग्रामोफोन में मुख्य तीन भाग होते हैं :— (१) यंत्र जो रेकार्ड को घुमाता है, (२) रेकार्ड, (३) ध्वनि बाक्स अर्थात साउन्ड बाक्स। ग्रामोफोन के अन्दर पेंदे में एक शक्तिशाली कमानी अर्थात् स्प्रिंग (जैसी की घड़ी में लगी होती है) —भी रहती है। चाभी भरने से यह कमानी कस जाती है। यह एक खटके से रुकी रहती है। इस खटके को हटा देने से कमानी इस पर लगे हुये तवे को घुमाने लगती है। इस तवे पर रेकार्ड रखा जाता है तो वह भी घूमने लगता है।

ग्रामोफोन ध्वनि बाक्स

ध्वनि बाक्स ही ग्रामोफोन का मुख्य अंग है। यह फोनोग्राफ में वर्णित भोंपू तथा तनुपट से कुछ भिन्न होता है। इस में अबरक का एक समतल गोल तनुपट दो रबर की चूड़ियों के बीच में रख कर ध्वनि बाक्स में फंसा रहता है। (उपरोक्त चित्र में देखो) इस

तनुपट के मध्य बिन्दु 'व' पर एक उत्तोलक लगा रहता है। इस उत्तोलक को मोड़ कर नीचे की तरफ कर लेते हैं। इसके नीचे के भाग पर एक पेच से सुई कसी जाती है। इस तनुपट के दूसरी ओर एक भोंपू लगा रहता है। जब रेकार्ड घूमने लगता है तो सुई की नोक को रेकार्ड के बाहरी भाग पर रख देते हैं फलतः सुई रेकार्ड की सर्पिल छल्लेदार रेखाओं में घूमने लगती है। सुई इन रेखाओं के अनुसार अगल-बगल कम्पन करने लगती है तथा उत्तोलक भी उसी प्रकार कम्पन करता जाता है। उत्तोलक के ये कम्पन तनुपट में कम्पन उत्पन्न करते हैं। पुनः यह कम्पित तनुपट वायु में कम्पन उत्पन्न करता है तथा ध्वनि उत्पन्न होती है जो हम को सुनाई पड़ती है। फलस्वरूप रेकार्ड में अंकित ध्वनियां भोंपू में से बाहर निकल कर सब को सुनाई देती हैं और सुनने वाले आनन्द लेते रहते हैं।

रेकार्ड बनाने में भोंपू ही ध्वनि को एकत्रित करके तनुपट पर केन्द्रित करता है। इस ध्वनि की शक्ति निर्बल होती है तथा क्षेत्र भी सीमित होता है। जब कई व्यक्ति साथ साथ गाते तथा बोलते हैं तो सब को भोंपू के पास एकत्रित कर उसके पास सटना पड़ता है। इसमें कई कठिनाइयां होती हैं, फलतः अब रेकार्ड विद्युत यंत्रों से बनाये जाते हैं। यह यन्त्र अधिक शक्ति-शाली तथा सफल होते हैं।
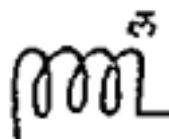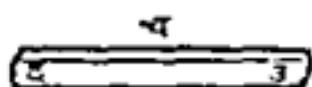
'च' एक छड़ चुम्बक है, इसके उत्तरीय ध्रुव 'उ' तथा दक्षिणीय ध्रुव 'द' हैं। 'ल' एक बारीक कपड़ा चढ़े तांबे के तार की लच्छी अर्थात् वेष्टन के तार के सिरे एक गल्वनॉमीटर 'ग' से जुड़े हैं। गल्वनॉमीटर विद्युत्धारा देखने का एक साधारण यन्त्र होता है जब वेष्टन के पास चुंबक स्थिर है तो गल्वनॉमीटर की सुई स्थिर है, परन्तु जैसे आप चुंबक की तीव्रता से वेष्टन के अन्दर बिन उसको छुए हुए, गतिमान करें तो गल्वनॉमीटर की सुई एक दिशा में चलायमान हो जाती है। जैसे ही चुंबक रुक जाती है, सुई भी रुक जाती है। यदि चुम्बक को वेष्टन के बाहर शीघ्रता से निकालें तो सुई विपरीत दिशा में गति करती है तथा चुम्बक के रुकते ही सुई भी रुक जाती है। यह फल वेष्टन अथवा चुम्बक किसी को भी गतिमान करने से होता है। इसका अर्थ यह है कि इन दोनों में से किसी एक को दूसरे के अन्दर अथवा ऊपर गति कराने से गल्वनॉमीटर की सुई गतिमान हो जाती है। गल्वनॉमीटर की सुई तो विद्युत् से ही चलती है। इसलिये यह सिद्ध हुआ कि वेष्टन अथवा चुम्बक किसी को भी गतिमान करने से वेष्टन में विद्युत् उत्पन्न होती है। चुम्बक के चारों ओर उसकी शक्ति का क्षेत्र

तनुपट के मध्य बिंदु 'ब' पर एक उत्तोलक लगा रहता है। इस उत्तोलक को मोड़ कर नीचे की तरफ कर लेते हैं। इसके नीचे के भाग पर एक पेच से सुई कसी जाती है। इस तनुपट के दूसरी ओर एक भोंपू लगा रहता है। जब रेकार्ड घूमने लगता है तो सुई की नोक को रेकार्ड के बाहरी भाग पर रख देते हैं फलतः सुई रेकार्ड की सर्पिल छल्लेदार रेखाओं में घूमने लगती है। सुई इन रेखाओं के अनुसार अगल-बगल कम्पन करने लगती है तथा उत्तोलक भी उसी प्रकार कम्पन करता जाता है। उत्तोलक के ये कम्पन तनुपट में कम्पन उत्पन्न करते हैं। पुनः यह कम्पित तनुपट वायु में कम्पन उत्पन्न करता है तथा ध्वनि उत्पन्न होती है जो हम को सुनाई पड़ती है। फलस्वरूप रेकार्ड में अंकित ध्वनियां भोंपू में से बाहर निकल कर सब को सुनाई देती
वाले आनन्द लेते रहते हैं।

रेकार्ड बनाते में भोंपू ही ध्वनि को
केन्द्रित करता है। इस ध्वनि की शक्ति
भी सीमित होता है। जब कई व्यक्ति
हैं तो सब को भोंपू के पास एकत्रित
है। इसमें कई कठिनाइयां होती
यंत्रों से बनाये जाते हैं। यह
सफल होते हैं।

चुम्बक का दक्षिणीय ध्रुव है। इस दशा में इसकी चुम्बकीय शक्ति स्थाई बनी रहती है। इस 'द' भाग पर कागज़ का एक बेलन रहता है जो इससे कुछ अधिक व्यास का होता है, कि इस पर सरलता से आगे पीछे गति कर सके। इस बेलन के अग्रभाग पर एक पतले कागज का शंकु लगा रहता है जो इस बेलन का मुंह बन्द कर देता है। शंकु जाली 'ज' से बन्द तथा स्थिर रहता है। बेलन तथा शंकु एक शरीर बन जाते हैं। इस बेलन पर एक वेष्टन 'त' लिपटी रहती है। इसके दोनों सिरे माइक्रोफोन से बाहर निकले रहते हैं।

जब कोई जाली 'ज' के सामने गाता तथा बोलता है तो वायु के कम्पन इस कागज़ के शंकु को कम्पित करते हैं, फलतः शंकु मय वेष्टन के ध्रुव 'द' पर आगे पीछे गति करता है तो वेष्टन में विद्युत् उत्पन्न होती है, जिस उतार चढ़ाव की ध्वनि होती है। उसी प्रकार से वेष्टन गति करती है फलतः इस वेष्टन में उसी प्रकार की विद्युत् उत्पन्न होती है और यह दोनों तारों से बाहर आती रहती है। इस प्रकार माइक्रोफोन ध्वनि को विद्युत् में परिवर्तित करता रहता है, परन्तु यह विद्युत् क्षीण होती है। इसको विद्युत् सम्वर्धक अर्थात् एम्प्लीफायर में प्रवेश कराकर शक्तिशाली बना लेते हैं। एम्प्लीफायर रेडियो के समान होता है। माइक्रोफोन कई प्रकार के होते हैं परन्तु उपरोक्त वर्णित माइक्रोफोन का ही अधिक प्रचलन है। इस शक्तिशाली विद्युत् से ध्वनि रेखाएं बनाए जाते हैं।

जिसे चुंबकीय क्षेत्र कहते हैं। जब चुम्बक अथवा वेष्टन स्थिर है तो वेष्टन में चुम्बकीय क्षेत्र की शक्ति भी स्थिर है। परन्तु जब इन दोनों में से कोई एक गतिमान होता है तो वेष्टन में भी चुम्बकीय शक्ति न्यूनाधिक होती है। वेष्टन में इस चुम्बकीय शक्ति के न्यूनाधिक होने से ही वेष्टन में विद्युतधारा उत्पन्न होती है। यह विद्युत् वेष्टन की चूड़ियों की संख्या, चुम्बक की शक्ति तथा इन की गति की तीव्रता पर निर्भर है। इसी सिद्धान्त पर माइक्रोफोन बना है। माइक्रोफोन ध्वनि को विद्युत् में परिवर्तित करने वाले यंत्र को कहते हैं।
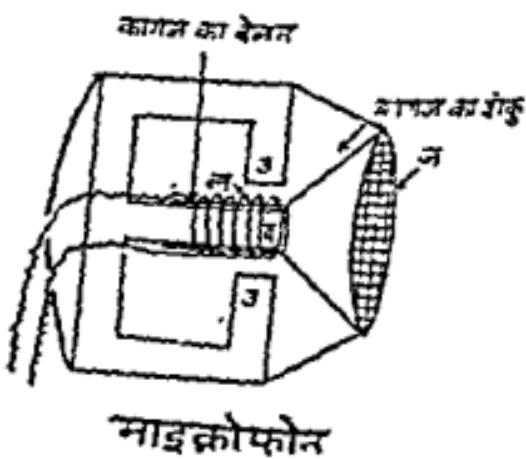
माइक्रोफोन

माइक्रोफोन में एक स्थाई शक्तिशाली कटोरीनुमा चुम्बक होता है जिस की मोटी कोरें अन्दर की तरफ झुकी रहती हैं जैसे उ, उ भाग है। यह दोनों भाग उ, उ इसके उत्तरीय ध्रुव होते हैं। कटोरी के मध्य भाग में एक वेष्टन 'द' होता है जो इस कटोरीनुमा

बना लेते हैं। रेकार्ड बनाने की यह विद्युत् विधि है यांत्रिक विधि का वर्णन इस अध्याय में पहले बताया जा चुका है। परन्तु अब विद्युत् विधि अधिक प्रचलित है, इस रेकार्ड से ग्रामोफोन द्वारा ध्वनि उत्पन्न करते हैं। परन्तु अब ध्वनि-चालक के स्थान पर पिकअप का भी उपयोग होता है।

इस पिकअप में घोड़े के नाल के समान एक चुम्बक रहता है। इसमें दो जोड़े ध्रुव ड, ड तथा द, द होते हैं। इसमें एक नरम लोहे की मोटी सुई के समान छड़ 'अ' होती है। इस पर केप्टन 'ल' लिपटी रहती है। इसे आर्मेचर कहते हैं। इस आर्मेचर 'अ' के नीचे भाग में पेच से नोकदार सुई लगी रहती है। यह सब एक छोटे से बक्स में बन्द रहता है। इसे पिकअप कहते हैं। जब ग्रामोफोन में रेकार्ड घूमने लगता है तो पिकअप की सुई को इसके ऊपर रख देते हैं, जैसा ध्वनिचालक की सुई को रखते हैं। यह पिकअप ध्वनि-चालक के स्थान पर काम करता है। पिक-अप के केप्टन 'ल' के दोनों तार विद्युत्

संवर्धक से जोड़ देते हैं। पिकअप की सुई रेकार्ड की लहरदार रेखाओं से घूमने लगती है तो आर्मेचर 'अ' तथा केप्टन 'ल' के आस पास चुम्बक क्षेत्र के चुम्बकीय क्षेत्र में परिवर्तन करती है परन्तु

रेकार्ड बनाने का विद्युत यंत्र

उ, द एक मुड़ा हुआ चुम्बक है जिसके ऊपर एक वेष्ट
लिपटी है। इस वेष्टन में बैटरी से विद्युत् भेजने से यह विद्यु
चुम्बक बन जाता है। दोनों ध्रुवों के मध्य में एक लोहे की छड़ 'ब'
पर एक वेष्टन 'ल' लिपटी है। छड़ 'ब' के मध्य में एक नरम लोहे
की मोटी सुई सी है इसको आर्मेचर कहते हैं। इसके सिरे पर पेच
में सुई लगी है। इस वेष्टन 'ल' के दोनों सिरे एम्प्लीफायर में जुड़े
रहते हैं। माइक्रोफोन में उत्पन्न न्यूनाधिक विद्युत् धारा एम्प्लीफायर
में होकर वेष्टन 'ल' में आती है, फलतः यह आर्मेचर इस न्यूनाधिक
विद्युत् प्रभाव से अगल बगल गति करता है तो इसमें लगी तीखी
सुई अपने नीचे रखे घूमते हुए रेकार्ड पर सर्पिल छल्लेदार रेखाएं
करती जाती हैं और रेकार्ड बनता जाता है, जैसा कि ऊपर वर्णित
है। इससे मास्टर रेकार्ड बनता है तथा इससे सैकड़ों प्रतिलिपियां

मूकध्वनि

एक वैज्ञानिक कुछ प्रयोगों में लिप्त था। उसने एक छोटीसी मछली को एक पानी भरे गिलास में डाल कर एक यंत्र के सामने रखदी। यंत्र का बटन दबाए अभी कुछ ही सेकिण्ड हुए थे कि मछली चितपुट होगई और उसके प्राण पखेरू उड़ गए, न कुछ दिखाई दिया, न कुछ सुनाई दिया, परन्तु मछली का काम तमाम होगया। इसी प्रकार हरी घास पर एक चूहा यंत्र से लगभग १०० गज की दूरी पर उछल कूद कर रहा था। उस पर लक्ष्य किया गया बटन दबाते ही कुछ क्षण में चूहा बेजान पत्थर की तरह लुढ़क पड़ा। कुछ सज्जन हँसेंगे कि चूहा ही तो मार पाया। सच है, परन्तु आज तो चूहा ही शिकार बना, कल का क्या पता? कदाचित् यही शक्ति तृतीय विश्व महायुद्ध में अणु तथा हाइड्रोजन बम्ब से भी कहीं अधिक भयानक तथा घातक बन जाय।

है मूक ध्वनि की शक्ति! इसी शक्ति से हमारे निर,
वैज्ञानिक क्षेत्रों में अनेकों आविष्कार होने की सम्भ
इनसे जीवों तथा मानव समाज की भी सेवा हो

…ध्वा तरंगों से उत्पन्न होती है। यह मनुष्य
…से है। यदि प्रति सेकिण्ड तरंगें न्यून उत्पन्न

वेष्टन में विद्युत् उत्पन्न होती है, तथा विद्युत् संवर्धक में जाती रहती है। विद्युत् संवर्धक इसको शक्तिशाली बना देता है। यह शक्तिशाली विद्युत् ध्वनि प्रसारक में भेजते हैं जो इस विद्युत् को ध्वनि में परिवर्तित करता है तो ध्वनि प्रसारक से ध्वनि आती रहती है।

ध्वनि प्रसारक माइक्रोफोन का विपरीत यंत्र है परन्तु बनावट समान है। कार्य लेने का ढंग उलटा है। इसका शंकु बड़ा होता है कि अधिक गति कर सकें जिससे वायु में कम्पन विशाल हों जिससे दूर दूर बैठे व्यक्तियों को साफ साफ सुनाई दे सके।

इस प्रकार के प्रबन्ध को रेडियोग्राम भी कहते हैं। इसमें रेकार्ड के उलटने तथा उठाने का काम यंत्रों से स्वतः होता है तथा रेकार्ड घुमाने का कार्य विद्युत् यंत्रों से होता है। इस प्रकार ध्वनि अंकित कर पुनः रेकार्ड से ध्वनि उत्पन्न करने का यह इतिहास है। परन्तु मूकध्वनि का इतिहास और भी विचित्र तथा मनोरंजक है जो आगे पाठ में वर्णित है।

मूकध्वान

एक वैज्ञानिक कुछ प्रयोगों में लिप्त था। उसने एक छोटीसी मछली को एक पानी भरे गिलास में डाल कर एक यंत्र के सामने रखदी। यंत्र का बटन दबाए अभी कुछ ही सेकिण्ड हुए थे कि मछली चितपुट होगई और उसके प्राण पखेरू उड गए, न कुछ दिखाई दिया, न कुछ सुनाई दिया, परन्तु मछली का काम तमाम होगया। इसी प्रकार हरी घास पर एक चूहा यंत्र से लगभग १०० गज की दूरी पर उछल कूद कर रहा था। उस पर लक्ष किया गया बटन दबाते ही कुछ क्षण मे चूहा बेजान पत्थर की तरह लुढ़क पड़ा। कुछ सज्जन हंसेगे कि चूहा ही तो मार पाया। सच है, परन्तु आज तो चूहा ही शिकार बना, कल का क्या पता ? कदाचित यही शक्ति तृतीय विश्व महायुद्ध में अणु तथा उद्‌जन बम्ब से भी कहीं अधिक भयानक तथा घातक बन जाय।

यह है मूक ध्वनि की शक्ति ! इसी शक्ति से रसायनिक, औद्योगिक तथा वैज्ञानिक क्षेत्रों मे अनेकों आविष्कार होने की प्रबल सम्भावना है। इनसे जीवों तथा मानव समाज की भी सेवा हो सकती है।

ध्वनि लहरों अथवा तरंगों से उत्पन्न होती है। यह तरंगें विभिन्न कम्पनांक की होती हैं। यदि प्रति सेकिण्ड तरंगे न्यून उत्पन्न

होती है तो कम्पनांक न्यून होता है तथा जब प्रति सेकिण्ड अधिक तरंगे उत्पन्न होती है तो उच्च कम्पनांक होता है। उच्च कम्पनांक की ध्वनि उच्च स्वर का राग उत्पन्न करती है। यह सुरीला तथा मीठा अर्थात् कर्णप्रिय होता है। हारमोनियम के बांए तरफ के पर्दे निम्न स्वर के तथा दाहिने तरफ के पर्दे उच्च स्वर अर्थात् उच्च कम्पनांक के होते हैं। यह स्वर असीमित होते हैं। हमारे कान केवल कुछ सीमित कम्पनांक की ध्वनि को ही सुन सकते हैं। साधारणतया २० कम्पनांक प्रति सेकिण्ड से न्यून ध्वनि हमारे कान नहीं सुन सकते हैं। इसी प्रकार २०,००० कम्पनांक प्रति सेकिण्ड से अधिक ध्वनि को भी हम सुन नहीं पाते हैं। साधारणतया हमारे कानों के सुनने की सीमा यही है। इससे अधिक कम्पनांक प्रति सेकिण्ड की ध्वनि को पारध्वनि कहते हैं। क्योंकि यह हमारे सुनने की सीमा से परे है। इस ध्वनि को मूक ध्वनि कहते हैं। क्योंकि यह ध्वनि तो है, परन्तु हमारे लिए मूक है। यांत्रिक तथा विद्युत् विधियों से १२,०००,००० कम्पनांक की ध्वनि उत्पन्न की जारही है। यह कम्पनांक क्षेत्र मूकध्वनि का है। इस मूकध्वनि से विभिन्न प्रकार के अद्भुत तथा आश्चर्यजनक कार्य हो रहे हैं।

मूकध्वनि उत्पन्न करने के कई साधन हैं। यदि अत्यन्त चल विद्युत् को किसी क्वार्ट्ज़ के रवे के दो विपरीत धरातलों पर लगादें तो यह चल विद्युत् के कम्पनांक के अनुसार फूलता तथा पिचकता रहता है, फलतः इसके फूलने तथा पिचकने की गति के अनुसार वायु में उसी कम्पनांक की तरंगे उत्पन्न होती रहती हैं।

अगले पृष्ठ में चित्र नं० १६ में सायरन यंत्र है। इसके बेलन में नीचे टूंटी में से वायु धौंकनी से भरी जाती है। बेलन ऊपर से बन्द होता है। इस अचल ढक्कन में कुछ निश्चित छिद्र होते हैं, वे एक दिशा की तरफ कुछ झुके होते हैं। इस ढक्कन के ऊपर एक समान छिद्रवाला व विपरीत दिशा के छिद्रोंवाला चल ढक्कन लगा रहता है। चल ढक्कन कुम्हार के चाक के समान घूमता है। इसके छिद्रों में से वायु निकलती है। चल ढक्कन के छिद्र जब अचल ढक्कन के छिद्रों पर होते हैं तो वायु की फूकें निकल जाती हैं। अन्य दशा में यह फूकें नहीं निकलती हैं। जितनी तीव्रता से वायु बेलन में भरी जायगी उसी गति से चल ढक्कन घूमता है तथा उसी गति से फूकें भी निकलेंगी, क्योंकि दोनों ढक्कनों के छिद्रों की दिशा विपरीत होती है, इस कारण चल ढक्कन वायु के दबाव से घूमने लगता है। इस कारण अचल ढक्कन की फूकों को चल ढक्कन तीव्रता से काटता है, फलतः वायु दबाव के न्यूनाधिक होने से उसी प्रकार के कम्पनांक की ध्वनि उत्पन्न होती है। इस सायरन के सिद्धान्त पर मूकध्वनि का यंत्र बना है। इस यंत्र में चल ढक्कन के ऊपर एक चल आरी उन फूकों को तीव्रता से काटती है, फलतः जो ध्वनि तरंगे वायु में उत्पन्न होती हैं उनकी कम्पनांक चल ढक्कन की छिद्र संख्या, उसकी गति और आरी के दांतों की संख्या तथा उसकी गति पर निर्भर है। जब इनकी गति १८०० चक्र प्रति मिनिट होती है तो यदि कान को भली प्रकार ढका न जाय तो बहिरे होने

का भय रहता है। ११,००० चक्र प्रति मिनट पर जो ध्वनि उत्पन्न होती है वह इतनी उच्च कम्पनांक की होती है कि हमारे कान इस ध्वनि को नहीं सुन सकते हैं। अधिक तीव्रता पर ३०,००० कम्पनांक प्रति सेकिन्डवाली ध्वनि उत्पन्न होती है, यही मूक ध्वनि है।

जेट संचालित वायुयानों के कारखानों में जब वहां पर एंजिन की परीक्षा की जाती है तो उस समय इतनी उच्च कम्पनांक की ध्वनि होती है कि मनुष्य नहीं सुन सकता है। यह मूक ध्वनि होती है। मनुष्य भय से कांपने लगता है। अन्य तरंगों के समान यह भी सब दिशाओं में प्रसारित होती हैं। जब यह एक दिशा में केन्द्रित की जाती हैं तो इनका प्रभाव अत्यन्त भयानक हो जाता है। इनको एक दिशा में केन्द्रित करने हेतु एक विशेष यंत्र का प्रयोग होता है, इसे ध्वनि तोप कहते हैं। इस ध्वनि तोप से यह तरंगें अत्यन्त तीव्रता से निकलती हैं, फलतः इनकी शक्ति एक दिशा में केन्द्रित रहती है तथा अत्यधिक भयानक व घातक बन जाती है।

बहुत से पक्षी, जब हमको उनका राग सुनाई देना बन्द हो जाता है, फिर भी वह गाते रहते हैं। झींगर के आधे ही राग को हम सुनपाते हैं क्योंकि उसकी चीं-चीं की आधी ध्वनि हमारे सुनने की सीमा से उच्च कम्पनांक की होती है फलतः हमारे लिए यह मूकध्वनि होती है।

राडार के प्रयोग से पहले अंगरेज़ों ने जर्मन पनडुब्बी के भय का इस मूकध्वनि से सामना किया था। यह यंत्र धमगादड़ के

अंधेरे में अपना मार्ग ज्ञात करने के सिद्धान्त पर बनाया गया था। यह एक अद्भुत ईश्वरीय लीला है कि चमगादड़ अंधेरे में सुगमता से अपने मार्ग में किसी भी छोटी से छोटी वस्तु से बिना टकराए उड़ता चला जाता है। कारण यह है कि वह उड़ते समय अपनी लम्बी नुकीली नाक से मूकध्वनि की तरंगें छोड़ता जाता है। जो कोई वस्तु इन तरंगों के सामने पड़ती है उससे टकरा कर प्रतिध्वनि उत्पन्न होती है। चमगादड़ अपने बड़े-बड़े कानों से इस प्रतिध्वनि को ग्रहण करता जाता है। प्रतिध्वनि जिस वस्तु से टकरा कर लौटती है वह उस वस्तु की दिशा व दूरी पर निर्भर होती है, फलतः चमगादड़ को प्रत्येक वस्तु की ठीक दिशा व दूरी ज्ञात हो जाती है और वह इन सब वस्तुओं से बचता उड़ता चला जाता है।

द्वितीय विश्व महायुद्ध में जलयानों पर इस प्रकार के यंत्र लगाए गये थे जो मूक ध्वनि की लहरें पानी में प्रसारित करते थे। इसकी प्रतिध्वनि के ज्ञान से यदि कहीं भी कोई वस्तु पानी में हो तो उसका ठीक ज्ञान हो जाता था। इसी प्रकार से शत्रु के युद्धकी विस्फोटकों तथा पनडुब्बियों का भी पता लग जाता था। फलतः इनसे अपनी रक्षा तथा उनके विनाश का भी उपाय किया जाता था।

यदि आप इन मूकध्वनि की तरंगों के केन्द्र में अपनी उंगली रखदें तो तत्काल जलने लगेगी। यदि रुई का एक फाया रख दिया जाय तो उसमें २-४ सेकिन्ड में ही आग लग जाती है। इसी प्रकार गिलास में पानी उबलने लगता है। कारण यह है कि मूकध्वनि में एक प्रकार की महान शक्ति है। मूकध्वनि की शक्ति से ४० वॉट के लगभग ५० विद्युत् के बल्ब प्रकाशित हो सकते हैं। यह शक्ति विभिन्न कार्यों में लाभदायक सिद्ध हुई है।

अमेरिका के कई कारखानों में इसकी सहायता से धातुओं से ढले हुए पुर्जों की परीक्षा की जाती है। १,०००,००० प्रति सेकिन्ड कम्पनांक की ध्वनि १०–२० फीट मोटी ढली हुई लोहे की गाटरों पर डाली जाती है, जो प्रति ध्वनि निकलती है उसकी परीक्षा की जाती है। ढली हुई वस्तु में जहां कहीं पर यदि कोई दोष होता है वहां की प्रतिध्वनि का स्वर बेसुरा होता है, फलतः यह दोष कहां पर, कितना बड़ा तथा किस प्रकार का है, यह निश्चित रूप से ज्ञात हो जाता है। इस प्रकार के यंत्र से जलयानों के एंजिनों के पहियों की धुरी, रेलगाड़ी तथा अन्य यंत्रों के भागों की भी परीक्षा की जाती है, फलतः दोषोक्त भाग प्रयोग में आने का भय नहीं रहता है।

मूकध्वनि की सहायता से आपके मोटर घर का द्वार स्वयं ही खुल जाता है तथा बत्तियां भी प्रकाशित हो जाती हैं। जब आप मोटर में बैठे हुए घर के समीप पहुंचे तो मोटर में लगे एक बटन को दबा दीजिए। इससे एक सीटी से मूकध्वनि की लहरें निकलेंगी। इनको मोटर घर के फाटक पर लगा माइक्रोफोन ग्रहण कर लेता है। इससे एक यंत्र गतिशील हो जाता है, फलतः मोटर घर का द्वार खुल जाता है तथा बत्तियां भी प्रकाशित हो जाती हैं। आपको न मोटर रोकनी पड़ती है, न उतरना पड़ता है।

दूध के मथ करने हेतु कई विदेशी दुग्धशालाओं में मूकध्वनि की सहायता ली जाती है। दूध की पतली धार एक [illegible] के

परदे पर गिरती है। यह परदा मूकध्वनि उत्पन्न करता है। इ
जो मक्खन के कण रहते हैं वह अत्यन्त सूक्ष्म कणों में विभ
हो जाते हैं, फलतः दूध में पूर्णतया मिले रहते हैं तथा इकट्ठे कि
ऊपर नहीं तैरने लगते हैं। दूध पेट में जाकर अत्यन्त शी
तथा सुगमता से पच जाता है। बीमारों तथा बच्चों के हेतु
दूध अत्यन्त लाभदायक सिद्ध हुआ है। इस प्रकार जो कीट
दूध में होते हैं वह भी नष्ट हो जाते हैं तथा कई दिनों तक
दूध बिना बिगड़े रखा जा सकता है। इसी प्रकार चटनी, मुर
तथा फल इत्यादि भी निष्कीटाणु कर के बहुत दिनों तक रखे
सकते हैं। इनसे किसी भी प्रकार को भोजन मात्रा न्यून न
होती है।

पारा तथा पानी एक दूसरे से बहुत भारी होते हैं तथा मि
नहीं हैं। यदि एक गिलास में दोनों को भर कर मूकध्वनि
केन्द्र में २-४ सेकिन्ड रख दिया जाय तो एक हलके भूरे रंग
घोल बन जाता है। इसी प्रकार कई विदेशी कारखानों में है
क्रीम तथा औषधिओं को मिलाने का कार्य लिया जाता है। पहले
जिस कार्य में कई दिन लग जाते थे अब मूकध्वनि की सहायता
से क्षणों में ही हो जाता है।

सूखा दूध, साबुन तथा अन्य प्रकार की औषधियां तथा रं
इत्यादि के सुखाने का कार्य भी हो रहा है। इससे कीटाणु भी
नष्ट हो जाते हैं। यह वस्तुएं छूट कर एक परदे पर गिरती हैं।

यह परदा मूकध्वनि की लहरें उत्पन्न करता है। यह लहरें इस चूर्ण को इस तीव्रता से चलाती हैं कि सब शीघ्रता से सूख जाते हैं।

एक कांच के पात्र में कुछ कुहरा बनाकर मूकध्वनि की लहरों के केन्द्र प्रदेश में रखा गया। लहरें छोड़ते ही एक सेकिन्ड ही में कुहरा अन्तर ध्यान हो गया तथा पात्र पारदर्शक हो गया। अब प्रयोग किया जा रहा है कि मूकध्वनि की सहायता से हवाई अड्डों के ऊपर से कुहरा किस प्रकार दूर किया जा सकता है। जब कुहरे पर मूकध्वनि की लहरें केन्द्रित की जाती है तो वह तत्काल पानी बनकर बरस जाता है। फलतः हवाई अड्डा साफ हो जाया करेगा तथा वायुयानों को उतरने में कोई असुविधा नहीं होगी। यदि १०० फीट ऊपर तक का भी कुहरा साफ हो गया तो राडार तथा अन्य यंत्रों को इस कार्य से छुटकारा मिल जावेगा। पुनः अन्य आवश्यक कार्यों में सहयोग दे सकेंगे। इस प्रकार वायुयान प्रत्येक मौसम में सुगमता से उतर सकेंगे।

मछली पकड़ने वाले जलयानों पर भी यह यंत्र लगाये जा रहे हैं। इनकी सहायता से यह ज्ञात हो जाया करेगा कि मछलियां किस स्थान पर एकत्रित हैं। पुनः इनको जाल में फसाने में कुछ देर नहीं लगेगी। फलतः कार्य सुगम हो जावेगा तथा शिकार अधिक होगा। यही जलयान यह भी ज्ञात कर सकेंगे कि पुराने डूबे हुए जलयान किस स्थान पर पड़े हैं। इस प्रकार उनके निकालने का प्रबन्ध किया जावेगा।

मूकध्वनि की सहायता से शत्रु के राकेट तथा अन्य कई प्रकार के अस्त्र-शस्त्रों का भी पता ज्ञात हो जाया करेगा, तथा स्वःरक्षा का भी प्रबन्ध हो सकेगा।

रूस के कुछ मूकध्वनि के ज्ञाताओं ने फल तथा अन्न के बीजों पर भी मूकध्वनि का प्रभाव ज्ञात किया है तथा इनकी उपज में अधिक उन्नति पाई है। इस प्रकार से आलू एक सप्ताह प्रथम फूलता है तथा उपज भी ४०-५० प्रतिशत अधिक होती है। मटर अत्यन्त शीघ्र उगती है तथा उपज त्रिगुनी होती है। यदि विज्ञान की यही दशा रही तो संसार में खाने पीने का कष्ट रहने की कोई संभावना नहीं प्रतीत होती है, तथा सर्व प्रकार के खाद्य पदार्थ उत्तम तथा सस्ते मिलेंगे।

अमेरिका के एक कारखाने में जहां पर कोयले से काजल बनाया जाता है, वहां पर बहुत सा काजल चिमनी में से उड़ जाया करता था, तथा वायु में नष्ट हो जाता था। अब मूकध्वनि की लहरें काजल की पेटी पर केन्द्रित की जाती हैं। यह उड़ते हुए कणों में अत्यन्त हलचल मचा देती हैं तथा यह एक दूसरे से टकरा कर मिल जाते हैं और नीचे गिर जाते हैं। इस प्रकार माल भी अधिक तैयार होता है तथा जो धुंआ वायु को दूषित करता था वह भी बन्द हो गया है। इसी प्रकार जिन प्रदेशों में अधिक कारखाने हैं। वहां पर भी कार्य लिया जावेगा तो वहां की जनता का इस धुंए से पाप कट जावेगा तथा उनका स्वास्थ्य सुधरने की प्रबल आशा है।

इसी मूक ध्वनि की लहरों से एक अमेरिकन कम्पनी कपड़े धोने का कार्य करना विचार रही है। यदि मैले वस्त्रों पर मूक ध्वनि की लहरें केन्द्रित की जांय तो उस मैल तथा मिट्टी के कणों में इतनी हलचल उत्पन्न होती है कि वह नीचे गिर गिर कर बैठ जाते हैं तथा वस्त्र बिना पानी, साबुन व मसाला लगाए साफ हो जाते हैं तथा व्यय भी न्यूनतम होता है।

एक यंत्र इतना शक्तिशाली बनाया गया है कि उसका प्रभाव हजार फ़ीट पर भी होता है। यदि कोई मनुष्य इसके केन्द्र प्रदेश में खड़ा हो तो उसको न कुछ दिखाई देता है, न कुछ सुनाई देता है, न वायु प्रतीत होती है परन्तु उसको अत्यंत भय प्रतीत होता है तथा वह बीमार सा हो जाता है।

यदि मनुष्य साधारण तीक्ष्ण ध्वनि में एक से डेढ़ घन्टे तक खड़ा रहे तो वह कुछ काल के लिए बहरा हो जाता है। परन्तु मूक ध्वनि तो ६५ गज़ पर मनुष्य के प्रति प्राणघातक हो सकती है तथा ३२५ गज की दूरी पर अपाहिज बना सकती है। जानवरों पर अधिक प्रयोग किया गया है। खेती तथा फल नष्ट करने वाले पक्षियों को भय देकर भगाया जा सकता है। अन्धे मनुष्य इसकी सहायता से अपने मार्ग में सुगमता से चल सकेंगे। बिजली की एक टॉर्च बनी है जो मूक ध्वनि की लहरें फेंकती है। अन्धा प्राणी उसको हाथ में लेकर चलता है। इसकी प्रतिध्वनि को सुनता रहता है। इधर उधर की वस्तुएं, आते जाते मनुष्यों तथा सवारियों को इस प्रतिध्वनि से जान लेता है। इस प्रकार सब से बचता चला जाता है। फलतः आंख का कार्य कान से लेता है।

मूकध्वनि का प्रभाव विभिन्न प्रकार की बीमारियों पर है
किया गया है तथा अच्छी सफलता मिल रही है। उत्तम बात य
है कि अब डाक्टर बिना चीराफाड़ी किए आपरेशन कर सकें
कहा जाता है कि बिना चीरे ही खोपड़ी का भी आपरेशन हो
सकेगा। यह प्रयोग अभी छोटे जानवरों पर किया जा चुका है।
यदि ८००,००० कंपनांक वाली मूकध्वनि मस्तिष्क के किसी
भाग पर डाली जाय तो वहां के तंतुओं को नष्ट कर देती है।
इससे घाव तथा चोट अत्यन्त शीघ्रता से अच्छे हो जाते है।
आशा की जाती है कि निकट भविष्य में बिना च कू छुरी के ही
आपरेशन होने लगेंगे तथा चीराफाड़ी का दुःख संसार से दूर
जावेगा। ध्वनि का साधारण वेग ३३२ मीटर प्रति सैकिंड होता है,
परन्तु मूक ध्वनि का वेग इससे अधिक है। आजकल वायुयानों का
वेग भी इस वेग से परे होगया है। इन वायुयानों को अतिस्व
वायुयान कहते हैं। मूकध्वनि के पश्चात् ध्वनि दलदिश का स्थान
है।

फोटो-सेल

आपने देखा है कि बिजली की बत्ती अथवा बल्ब में विद्युत् धारा चालित करते ही कमरे में विद्युत् प्रकाश फैल जाता है। इसी प्रकार टार्च के बटन को दबाने से टार्च का बल्ब प्रकाश देने लगता है। जब यह प्रकाश देता है तो कुछ गर्म भी हो जाता है। कारण यह है कि विद्युत् इस बल्ब के बारीक तार में आकर इसको गर्म करती है जब यह अधिक गर्म हो जाता है तो प्रकाश देने लगता है अर्थात् विद्युत् से तार गर्म भी होता है तथा प्रकाश भी आने लगता है, फलतः यह बल्ब विद्युत् धारा को गर्मी तथा प्रकाश मे परिवर्तित करता है।

फोटो सेल
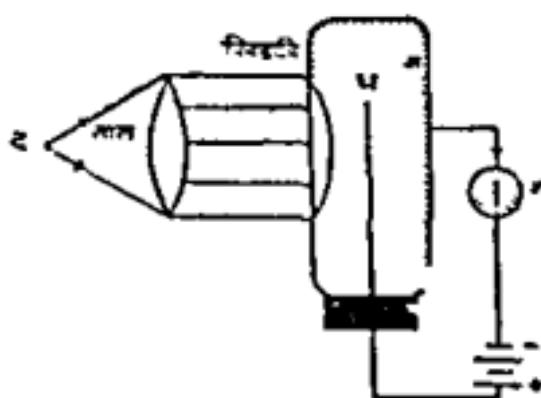
साधारण बिजली के बल्ब मे फोटो-सेल विपरीत होता है। यह प्रकाश को विद्युत् में परिवर्तन करता है। फलतः इसको फोटो-इलेक्ट्रिक-सेल भी कहते हैं। इसको चित्र सं० ३० में दिखाया गया है। यह प्रभाव कई प्रयोगों के पश्चात् निर्णय हो सका था। सन् १८८८ में श्री हालवस ने यह प्रयोग किया कि यदि जस्त की गेंद को ऋण विद्युत् प्रद करके उस पर साधारण प्रकाश डाला जाय तो गेंद की विद्युत् नष्ट हो जाती है। सन् १८८६ में दो एल्सटर तथा गेतल ने एक अन्य प्रयोग किया कि सोडियम तथा पोटेशियम धातुएं भी इसी प्रकार प्रकाश से प्रभावित हो जाती हैं। इन्होंने ही सर्व प्रथम फोटो-सेल बनाने में सफलता प्राप्त की। यह सब काम विद्युताणुओं के जन्म के पूर्व ही ज्ञात होचुका था। जब सन् १८६७ में श्री थामसन ने विद्युताणुओं अर्थात् इलेक्ट्रोन्स पर अनुसंधान किया तो ज्ञात हुआ कि उपरोक्त धातुओं में से प्रकाश के प्रभाव से विद्युताणु ही निकलते हैं। यह कण ऋणात्मक होने से धनात्मक वस्तु के प्रति आकर्षित हो जाते हैं।

चित्र मे फोटो-सेल के कांच के खोल के अन्दर दीवार 'स' पर प्रकाश प्रभावित सोडियम जैसी धातु का लेप होता है। इसके मध्य में तांबे का तार 'ध' लगा होता है। दीवार 'स' में एक तांबे के तार को झाल लगाकर जोड़ देते हैं। इसके सिरे को गल्वानोमीटर 'ग' के एक पेंच से जोड़ देते हैं। गल्वनॉमीटर 'ग' के दूसरे पेच को बैटरी के ऋण ध्रुवसे जोड़ देते हैं। फोटो-सेल के 'ध' तार को

इसमें से बाहर निकाल कर बटरा के धनध्रुव से जोड़ देते हैं। 'ध' ध्रुव को धनध्रुव अथवा एनोड कहते हैं, और 'स' को कैथोड़ कहते हैं क्योंकि यह ऋण ध्रुव से जुड़ा होता है। फोटो-सेल के कुछ भाग में 'स' धातु का लेप नहीं होता है, वह खिड़की कहलाती है जैसा चित्र में दिखाया गया है। तीव्र प्रकाश दीपक 'द' से ताल इस प्रकाश को खिड़की पर केन्द्रित करता है तो यह प्रकाश फोटो-सेल के अन्दर जाकर लेप 'स' पर पड़ता है फलत इस लेप में से विद्युताणु निकलने लगते हैं जिनको धनाणु 'ध' आकर्षित कर लेता है तो गल्वनोमीटर 'ग' की सूई घूमने लगती है। इसका अर्थ यह हुआ कि 'स' से 'ध' तक बेतार विद्युत् धारा विद्युताणु के रूप में चलती है। पुनः गल्वनोमीटर में जाकर सुई को चल कर देती है। इस फोटो-सेल में इस प्रकार दो ध्रुव 'स' तथा 'ध' होते हैं। इस कारण इस फोटो-सेल को द्विपद-सेल भी कहते हैं। प्रकाश की न्यूनाधिकता पर विद्युताणुओं की मात्रा निर्भर होती है। किसी किसी सेल में एनोड़ एक तार की जाली तथा छल्ले के रूप में भी होती है। फलतः फोटो-सेल प्रकाश को विद्युत् में परिवर्तित करता है। एक विशेष धातु सीसियम अत्यन्त प्रकाश प्रभावित होती है। आधुनिक फोटो-सेल में इसी का ही प्रायः उपयोग होता है। इस प्रकार बिजली का साधारण बल्ब विद्युत् को प्रकाश में तथा फोटो-सेल प्रकाश को विद्युत् में परिवर्तित करता है, फलतः दोनों एक दूसरे के विपरीत हैं।

o (

फोटो-सेल से उत्पन्न विद्युत् की शक्ति इतनी नहीं होती है कि कुछ कार्य कर सकें, इस कारण इस विद्युत् को विद्युत् संवर्धक में प्रवेश कराकर शक्तिशाली बना लेते हैं तब यह कई यंत्रों को चालित करने के योग्य हो जाती है। यह फोटो-सेल सदा एक पेटिका में बन्द रहता है जिसमें एक खिड़की में से प्रकाश जा सकता है।

फोटो-सेल दरवाजा खोलने तथा स्वयं बन्द होने के काम में भी आता है और चौकीदार की आवश्यकता नहीं होती है। द्वार के एक किवाड़ के पास छिपा कर एक बिजली का बल्ब लगादो और एक छोटे से छेदवाले पट्टे से बन्द करदो। इस छेद में से बिजली के प्रकाश की कुछ किरणें निकलती रहेंगी। यह दूसरे किवाड़ के पास आकर पड़ेंगी उसी स्थान पर फोटो-सेल लगादो कि यह प्रकाश किरणें फोटो-सेल की खिड़की पर पड़ें। फोटो-सेल के धन तथा ऋण तारों को निकाल कर विद्युत् सम्वर्धक में जोड़ दो। इससे जो शक्तिशाली विद्युत् निकले उसको फाटक खोलने तथा बन्द करने की मशीन में लगादो। जब तक यह विद्युत् आती रहती है मशीन दरवाजे को पकड़ी रहती है। जब बिजली आना बन्द हो जाता है तो यह मशीन दरवाजे को छोड़ देती है। फलतः दरवाजे में लगी कमानी दरवाजे को खोल देती हैं।

मानलो कि यह यंत्र बालिका विद्यालय के फाटक पर लगा है। जब कोई छात्रा फाटक के किवाड़ों के पास आकर किवाड़

खोलना चाहती है तो उसके ऐसा करते ही बिजली के बल्ब के प्रकाश तथा फोटो-सेल के बीच वह आजाती है तो फोटो-सेल पर प्रकाश गिरना बन्द होजाता है तो यंत्र में बिजली बन्द हो जाती है और दरवाजे की कमानी हट जाती है तो दरवाजा खुल जाता है। छात्रा अन्दर प्रवेश कर जाती है तो पुनः प्रकाश फोटो-सेल पर पड़ने लगता है तो स्वयं दरवाजा बन्द हो जाता है। इसी प्रकार मोटर पर का द्वार तथा उसमें दीपक प्रकाशित हो जाते हैं जब आपकी मोटर फाटक के समीप आजाती है। इसी प्रकार के यंत्र से चोर के आने पर घन्टी बजने लगती है क्योंकि चोर के दरवाजे पर आते ही प्रकाश बन्द हो जाता है और यंत्र घंटी को बजा देता है।

इसी फोटो-सेल से किसी दरवाजे में से कितनी जनता अन्दर गई, गिन सकते हैं। इस प्रकार के यंत्र पुस्तकालय तथा अजायबघर के दरवाजों पर लगे रहते हैं। किसी व्यक्ति के अन्दर जाने पर फोटो-सेल पर प्रकाश बन्द हो जाता है तो एक गिनने वाली मशीन चालू हो जाती है इससे गिनती का एक अंक आगे बढ़ जाता है। इस प्रकार क्रम चलता रहता है तो किसी समय अन्दर जाने वाले व्यक्तियों की संख्या ज्ञात कर लेते हैं।

इसी प्रकार के यंत्र कारखानों में भी लगे रहते हैं। जब कहीं पर आग लग जाती है तो स्वतः एक भोंपू बोलने लगता है। यही यंत्र बड़े शहरों के चौराहों पर सवारियों के आने जाने के

ध्वनि चलचित्र

ध्वनि चलचित्र का व्यापारिक प्रसार सन् १९२८ के लगभग हुआ। इससे पिछले अध्यायों में बताया जा चुका है कि रेकार्ड से ध्वनि मिश्रण द्वारा उत्पन्न की जाती थी फलतः यह आवश्यक था कि रेकार्ड उसी गति से चले कि पात्र की ध्वनि तथा उसका अभिनय प्रतिक्षण २ साथ हों। यह अत्यन्त कठिन पाया गया। द्वितीय कठिनाई यह थी कि रेकार्ड घिसता रहता था तथा उसकी क्षति का भय भी रहता था। यदि किसी दुर्भाग्यवश सुई रेकार्ड पर से तनिक भी खिसक गई तो पुनः पात्र का अभिनय तथा उसकी ध्वनि को समगति करना सम्भव नहीं होता था जब तक की रील समाप्त न हो जाय। इन त्रुटियों को दूर करने के लिए चल-चित्र पट्टी पर ही ध्वनिपथ अंकित करना आवश्यक हो गया। यह ध्वनिपथ चलचित्र पट्टी पर चित्रों के बराबर सब अंकित रहता है।

यह ध्वनिपथ दो प्रकार का रहता है। अधिकतर यह ध्वनि-पथ भी चित्रों के समान न्यूनाधिक श्यामलता का होता है। ध्वनि चलचित्र पट्टी को प्रकाश में देखने से यह ध्वनिपथ चित्रों के साथ साथ बना दिखाई पड़ता है। ध्वनिपथ बनाने के लिए एक विशेष

नियॉन दीपक को कार्य में लेना पड़ता है। यह दीपक साधारण दीपक से कुछ भिन्न होता है।
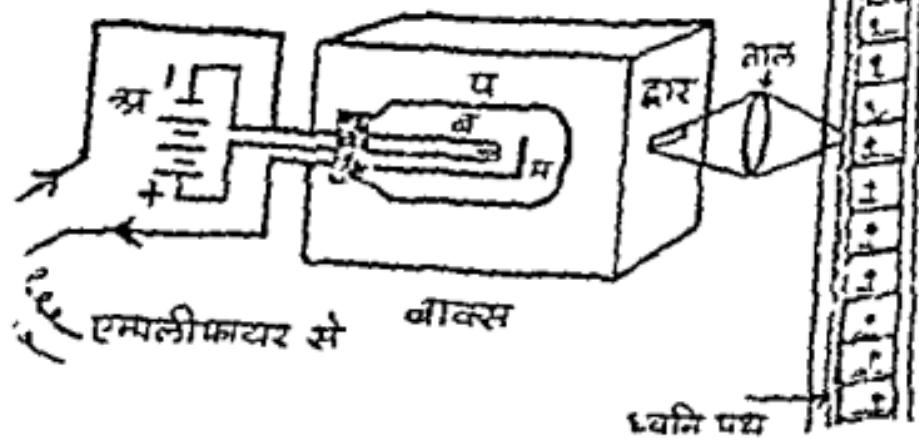
इस दीपक 'प' में एक वेस्टन 'ब' होती है जिसको बैटरी 'अ' से गर्म करते हैं, तो प्रकाशित होता है। इस वेस्टन पर एक मुड़ी हुई पत्ती 'म' टंगस्टन की लगी रहती है। यह वायुशून्य होता तथा इसमें हिलियम अथवा नियॉन गैस की तनिक मात्रा भरी रहती है। इसमें विद्युत प्रकाश उत्पन्न होता है। जब पात्र गाता तथा बोलता है तो माइक्रोफोन उसके सामने रहता है यह पात्र की ध्वनि को विद्युतधारा में परिवर्तित कर देता है। इस विद्युतधारा की शक्ति पात्र की ध्वनि के उतार चढ़ाव के कारण न्यूनाधिक

रहती है। इसको विद्युत सम्वर्धक में प्रवेश कराकर शक्तिशाली बना लेते हैं। पुनः इसी शक्तिशाली विद्युत् को तारों से इस दीपक तक जोड़ देते हैं, फलतः इसके न्यूनाधिक होने के कारण इस दीपक का प्रकाश भी न्यूनाधिक होता रहता है। यह दीपक एक पेटिका में बन्द रहता है कि बाहर का प्रकाश उस पर न पड़े। इस पेटिका में दीपक के सामने चौकोर छोटासा द्वार होता है, इसमे से प्रकाश बाहर निकलता है। इस प्रकाश को एक ताल से चलचित्र पट्टी पर केन्द्रित करते हैं, जैसा चित्र में दिखाया गया है। यह चित्र पट्टी समगति से ऊपर से नीचे चलचित्र यंत्र में समगती से चलती रहती है। यह प्रकाश इस चलचित्र पट्टी के एक किनारे पर पड़कर अपना प्रभाव कर इसके लेप में रसायनिक परिवर्तन कर देता है जैसा कि चित्र उतारने में होता है। यह चित्र पट्टी ध्वनि चलचित्र कैमरे में बन्द होती है तथा इस पर बाहर का प्रकाश नहीं पड़ने पाता है। फलतः इस चित्र पट्टी पर न्यूनाधिक श्यामलता के चौखटे बनते जाते हैं। इस को ध्वनिपथ कहते हैं, अथवा यह ध्वनि का चित्र है। इसे प्रमारक तथा हाइपो में धोकर साफ कर लेते हैं तो ध्वनिपथ फिल्म बन जाती है। फलतः चलचित्र पट्टी तथा ध्वनिपथ पृथक पृथक कैमरे से खींचे जाते हैं। इस प्रकार दो फिल्में एक चलचित्र तथा दूसरी ध्वनिचित्र की बनाई जाती है इन दोनों को एक साथ रख कर पुनः एक ही पट्टी पर दोनों का चित्र खींचते हैं तो ध्वनि चलचित्र पट्टी बन जाती है। इस पर पात्र के चित्र तथा ध्वनिचित्र दोनों

बराबर बने होते हैं। यह कार्य बहुत कठिन होता है क्योंकि दोनों का चित्र खींचते समय समगति रखना पड़ता है। इस प्रकार ध्वनि चलचित्र की रील तैयार की जाती है। एक ध्वनिचलचित्र पट्टी से कई प्रतिलिपियां बना लेते हैं जैसा कि एक निगेटिव से अनेकों चित्र बना लेते हैं कि कई नगरों में एक ही फिल्म साथ साथ दिखाई जा सके।
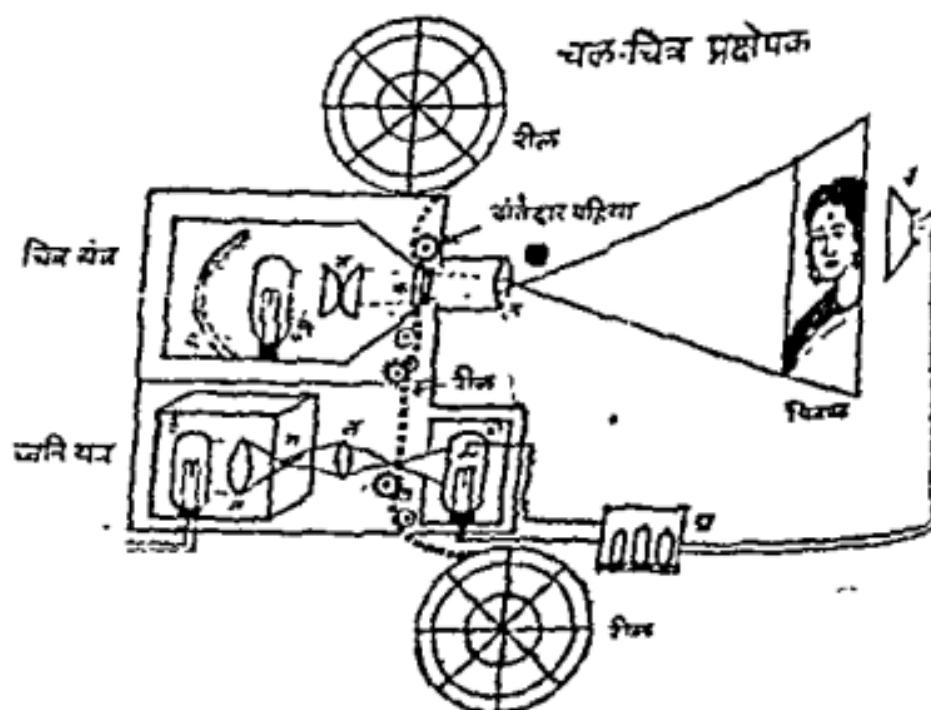
जब ध्वनि चलचित्र दिखाया जाता है तो फिल्म को एक यंत्र जिसको प्रोजेक्टर कहते हैं, उसकी चरखी पर चढ़ा देते हैं। इस यंत्र में दो पृथक पृथक यंत्र भाग होते हैं, एक चलचित्र के लिए तो

दूसरा ध्वनि के लिए। यह एक दूसरे के ऊपर बने होते हैं जैसा कि चित्र में दिखाया गया है। ऊपर वाला यंत्र भाग चलचित्रों के चित्र परदे पर बनाता है जैसा कि प्रथम वर्णन किया गया है। नीचे वाला यंत्र भाग ध्वनिपथ से ध्वनि उत्पन्न करता है, इसका वर्णन करते हैं

इस नीचे वाले यंत्र भाग में एक तीव्र दीपक 'ट' है इसको इक्साइटर कहते हैं। इसके प्रकाश को ताल 'त' चौकोर द्वार 'न' पर केन्द्रित करता है। इस द्वार का क्षेत्रफल न्यून होता है कि अब यह प्रकाश इस द्वार से निकल कर ताल 'त' से फिल्म के ध्वनिपथ पर केन्द्रित होता है तो केवल ... इन्च की चौड़ी धारी सी होती है। जैसे जैसे फिल्म नीचे खिचती जाती है इसके प्रत्येक भाग पर यह प्रकाश धारी पड़ती रहती है, फल : इस ध्वनिपथ की न्यूनाधिक श्यामलता के कारण इस ध्वनिपथ से ही न्यूनाधिक तीव्रता का प्रकाश निकलता रहता है। यह प्रकाश एक फोटो सेल 'दी' पर गिरता है। यह प्रकाश को विद्युत् में परिवर्तित कर देता है। फलतः इस दीपक में न्यूनाधिक विद्युत् धारा उत्पन्न होती रहती है। माइक्रोफोन ध्वनि को विद्युत् में, तो फोटोसेल प्रकाश को विद्युत में परिवर्तन करता है। फोटोसेल से यह [illegible] धारा एक विद्युत् सावर्धक में जाती है तो [illegible] विद्युत् धारा को अब ध्वनि प्रसारक में [illegible] जाती है। ध्वनिप्रसारक विद्युत् को [illegible] परदे के पीछे [illegible] नय का चित्र बनता

रहता है तथा ध्वनिप्रसारक से गाने तथा बातचीत आती रहती है
फलतः ऐसा प्रतीत होता है कि पर्दे पर का चित्र पात्र बोल रहा है।

आजकल एक नई पद्धति जिसको चुम्बकीय ध्वनि अंकन कहते
हैं, प्रचलित हो रही है। चलचित्र पट्टी पर चुम्बकीय पद्धति से च
अथवा पांच भागों पर ध्वनि अंकित करते हैं। अतः यह सम्भव हो
गया है कि चित्रपट के जिस स्थान पर पात्र अभिनय करता दिख
देता है उसी स्थान से ध्वनि भी आती प्रतीत होती है। फल
ध्वनि सदा पात्र के चित्र के साथ साथ रहती है। पुरानी पद्धति
ध्वनि केवल पर्दे के केन्द्र के पीछे रखे ध्वनिवर्धक से ही आती थी
फलतः अब चलचित्र में पूर्णरूप से वास्तविकता आगई है।

तालाब में तरंगें

पानी में एक पत्थर फेंको तो पानी में तरंगें उठ-उठ कर चारों ओर फैलने लगती हैं। इसी प्रकार जब आप बोलते हैं तो वायु में तरंगें उत्पन्न होती हैं, यह तरंगें एक दूसरे के सवाद को कान तक पहुंचा देती हैं। तालाब में गोल-गोल चक्कर फैलते दिखाई पड़ते हैं। इनमें कहीं कहीं पर पानी ऊंचा उठा हुआ है। इन चक्करों के बीच बीच में खाइयां सी हैं। तरंगों के इन उठे हुए भागों को शृङ्ग तथा शृङ्गों के बीच बीच में नीचे भागों को गर्त कहते हैं, फलतः शृङ्ग तथा गर्त मिलकर तरंग बनाते हैं। यह समस्त तालाब में फैलते जाते हैं। इसी प्रकार से वायु में भी तरंगें उत्पन्न हो होकर फैलती

रहती हैं। जल तथा वायु तरंगें भिन्न होती हैं।
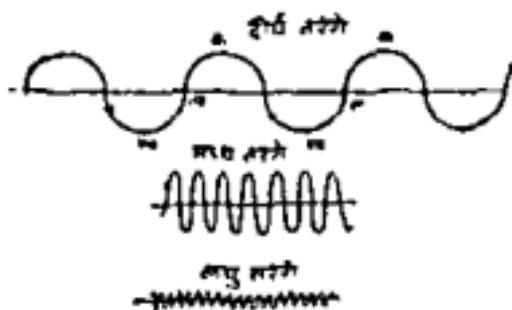
चित्र में तीन विभिन्न तरंगों के चित्र हैं। किसी भी दो शृङ्गों क-क अथवा दो गर्तों ख-ख की सीधी दूरी को तरंग-लम्बान कहते हैं। चित्र में दीर्घ, मध्य तथा लघु तरंगें दिखाई गई हैं। यह तरंग-लम्बान फीट तथा मीटरों में मापी जाती है। तालाब में यह तरंग-लम्बान ६-१० इंच की होती है परन्तु समुद्र में यही ४०-५० गज की होती है। 'ल' से 'ल' तक की वक्ररेखा को एक तरंग कहते हैं।

प्रत्येक तरंग की तरंग-लम्बान तथा उसका कम्पनांक विभिन्न होता है। वायु में तरंग वेग साधारणतया ११०० फीट प्रति सेकंड अथवा ३३२ मीटर होता है परन्तु रेडियो तरंगों का वेग १८६००० मील प्रति सेकंड अथवा ३०,००,००,००,००० सेण्टीमीटर प्रति सेकंड होता है। यही कारण है कि गाने, संवाद तथा समाचार किसी भी रेडियो केन्द्र से तत्क्षण सुनाई पड़ते हैं। प्रत्येक रेडियो केन्द्र की तरंग-कम्पनांक तथा तरंग-लम्बान भिन्न होती है कि जिस केन्द्र को आप सुनना चाहें, चुनलें। यह रेडियो तरंगें जल तथा वायु तरंगों

से भिन्न होती है। इनको कोई सांसारिक पदार्थ रोक नहीं सकता है यह सबको पार कर आगे चली जाती है। जिस प्रकार ध्वनि को छोटी वस्तुएं पेड़ इत्यादि नहीं रोकते हैं, उसी प्रकार रेडियो तरंगों को विशाल पर्वत आदि नहीं रोकते हैं। यह सबको पार कर प्रसारित होती रहती हैं।
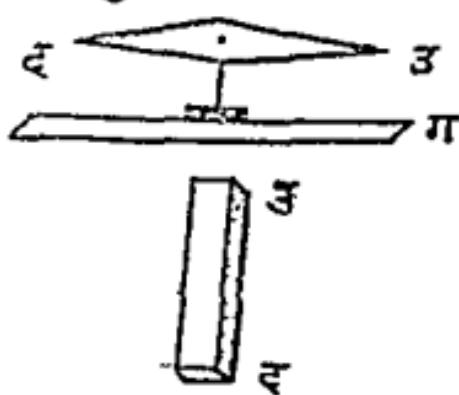
कांच या लकड़ी का एक पतला तख्ता अथवा कागज का एक गत्ता 'ग' लो। इसके ऊपर एक चुम्बकीय सुई रखदो तो उसका उत्तरीय ध्रुव 'उ' तथा दक्षिणीय ध्रुव 'द' उत्तर दक्षिण में होंगे। अब एक बड़ी सी चुम्बक के उत्तरीय ध्रुव 'उ' को गत्ते के नीचे घुमाओ तो ज्ञात होगा कि उस नीचे वाली चुम्बक की शक्ति वायु में होकर पुनः गत्ते में से प्रवेश करके भी गत्ते के ऊपर वाली चुम्बकीय सुई पर अपना प्रभाव करती है, फलतः चुम्बकीय शक्ति को हम

प्रकार की वस्तुएं रुकावट नहीं डालती हैं। एक प्रकार से यह वस्तुएं इस शक्ति के लिए पारदर्शक होती हैं। फलतः इनमें से प्रवेश कर के यह आगे चली जाती है। इस क्रिया को चुम्बकीय प्रेरण कहते हैं। रेडियो की तरंगें विद्युत-चुम्बकीय तरंगें हैं, अर्थात् विद्युत तथा चुम्बकीय दोनों शक्तियां होती हैं। यह तरंगें विश्व में बिना रुकावट के प्रसारित होती रहती हैं।

विद्युत चुम्बकीय प्रेरण
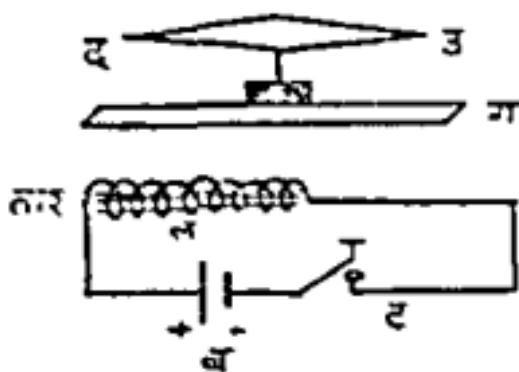
इस प्रयोग में नीचेवाली चुम्बक के स्थान पर एक वेष्टन 'ल' लेकर उसको बैटरी 'व' से तथा बटन 'ट' से जोड़दो, वेष्टन 'ल' को कुछ लोहे के पतले पतले तारों पर लपेटदो। बटन को दबाओ पुनः छोड़दो। इसका अर्थ यह हुआ कि वेष्टन में बैटरी से विद्युत् आने दो पुनः बन्द कर दो। ऐसा करते हुए देखोगे कि तवे की ऊपर की सुई एक तरफ को कुछ मुड़ी तथा पुनः दूसरी दिशा में वापिस हो गई। जैसे जैसे बटन को बन्द करो अथवा छोड़दो तो इसी प्रकार सुई भी मुड़ती रहती रहेगी। कारण यह है कि जिस प्रकार

वेष्टन में विद्युत् का प्रवेश होता है, उसी प्रकार से उसमें से विद्युत् शक्ति निकलती है और चुम्बकीय प्रभाव होता रहता है।
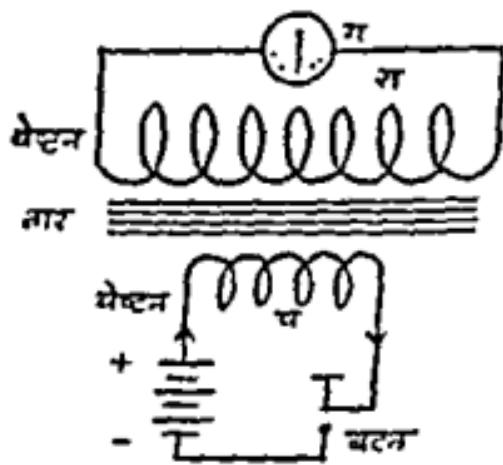
विद्युत चुम्बकीय प्रेरणा

उपरोक्त चित्र में विद्युत् चुम्बकीय प्रेरण दिखाया गया। बीच के तारों के ऊपर वेष्टन 'प' लिपटी रहती है। इसके ऊपर दूसरी वेष्टन 'स' लिपटी होती है। बटन को दबाने छोड़ने पर गल्वनामीटर 'ग' की सुई चलायमान होती है। वेष्टन 'स' तथा गल्वनामीटर 'ग' की विद्युत् धारा जो प्रथम वेष्टन 'प' में बहती है, कोई सम्बन्ध नहीं है। पुनः भी वेष्टन 'स' में विद्युत् उत्पन्न होती है। यदि वेष्टन 'स' में से गल्वनामीटर पृथक कर दिया जाय और दोनों के सिरे छड़ों से जोड़ दिए जांय तो इन दोनों सिरों से विद्युत् चुम्बकीय तरंगें निकलती रहेंगी।

फलतः विद्युत्-चुम्बकीय प्रेरण होता रहता है। इसी प्रकार रेडियो के एरियल में से विद्युत् तरंगें निकल कर विश्व में प्रसारित होती रहती हैं।

जितनी शक्ति से आप बोलते हैं, उतनी ही दूर तक आपकी बात सुनाई पड़ती है। आप कान में भी बात कर लेते हैं तथा गला फाड़कर जब आप चिल्लाते हैं तो सारा मोहल्ला सुनता है। यही बात रेडियो तरंगों की है। रेडियो तरंगें प्रसारण हेतु अत्यन्त शक्तिशाली विद्युत की आवश्यकता होती है। जो रेडियो तरंगें छत पर के तार एरियल से आती हैं वह दूर से आने के कारण शक्तिहीन तथा क्षीण होती हैं। इसको शक्तिशाली बनाने हेतु घर की विद्युत् लानी पड़ती है जो रेडियो के वाल्वों से जाकर इसे शक्ति प्रदान करती है।
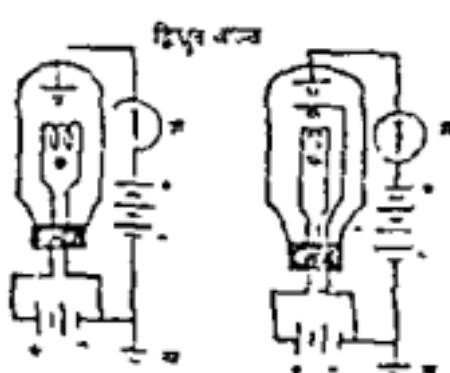
बिजली की बत्ती को बल्ब कहते हैं। यह विद्युत् से प्रकाश देते हैं। रेडियो के वाल्व इन प्रकाश देने वाले बल्बों से भिन्न होते

हैं। यह वायु शून्य होते हैं इनको वाल्व कहते हैं। इस शब्द वाल्व का अर्थ है एक द्वार जो एक ही तरफ से रास्ता दे। एडिसन महाशय ने सर्व प्रथम यह प्रयोग किया था। उन्होंने न मालूम क्यों, एक सामान्य बिजली की बत्ती में एक धातु की पत्ती अथवा प्लेट लगाया। चित्र में सामान्य बिजली की बत्ती का वेष्टन 'क' है जो विद्युत् धारा पास करने पर प्रकाश देता है। इसके ऊपर धातु की पत्ती 'प' है। इससे एक तांबे का तार जोड़ कर बाल्व से बाहर निकाल लिया, फलतः वाल्व के बाहर तीन तार हो गये। सामान्य दोनों तारों को बैटरी से जोड़ दिया तो वेष्टन 'क' प्रकाश देने लगता है, देखो चित्र ४८। जब इस बैटरी का विभवान्तर कम होता है तो प्रकाश न देकर यह वेष्टन 'क' गर्म होकर कुछ लाल सा रह जाता है। प्लेट वाले तार को गल्वनॉमीटर 'ग' से जोड़ दिया। गल्वनॉमीटर के दूसरे सिरे से तार लेकर दूसरी बड़ी बैटरी के धन ध्रुव से लगा दिया। दोनों बैटरी के ऋण ध्रुवों को मिला कर पृथ्वी से जोड़ दिया जैसा चित्र में दिखाया गया है कि यह 'य' है। ऐसा करते ही गल्वनॉमीटर की सुई मुड़ कर बताने लगती है कि गल्वनॉमीटर में विद्युत् धारा प्रवाहित हो रही है परन्तु 'क' से 'प' तक कोई तार नहीं है पुनः भी प्लेट में से होकर धारा चल रही है। प्लेट को अधिकाधिक धनात्मक करने पर गल्वनॉमीटर अधिकाधिक विद्युत् धारा बताता है और इसकी सुई अंकों पर अधिक दूर चली जाती है। परन्तु ज्यों-ज्यों प्लेट को कम धनात्मक करते जाते हैं, गल्वनॉमीटर की सुई कम अंकों पर आती जाती है। जब शून्य

विभव पर प्लेट को कर देते हैं तो गल्वनोमीटर की सुई शून्य पर आजाती है, फलतः यह सिद्ध होता है कि प्लेट में से कोई विद्युत् धारा प्रभावित नहीं हो रही है। इसी प्रकार यदि प्लेट को ऋणात्मक कर दिया जाय तो भी कोई धारा नहीं चलती है। इस प्रकार यह ज्ञात हुआ कि प्लेट में तभी धारा प्रभावित होती है जब प्लेट का विभवान्तर 'ब' के विभवान्तर से धनात्मक अर्थात् अधिक होता है।

'क' वेष्टन के गर्म तार से कोई संचालक तार प्लेट तक नहीं है, न वायु ही है, परन्तु विद्युत् धारा प्रभावित होती है, फलतः 'क' वेष्टन से प्लेट 'प' तक बेतार ही विद्युत् धारा चलती है। कई प्रयोगों से ज्ञात हुआ कि जब तार को अधिक गर्म किया जाता है तो उसमें से विद्युत्कण, विद्युताणु अथवा ऋणाणु इलैक्ट्रोन्स निकलते हैं। इनको धन विद्युतात्मक पात्र आकर्षित कर लेता है, फलतः विद्युत् धारा बेतार चलती रहती है। यही प्राथमिक रेडियो शास्त्र है। अनेकों प्रयोगों से ज्ञात हुआ कि यह विद्युत् धारा साधारण विद्युत् के समान ही कार्य करती है। इस प्रकार के तार 'क' को कैथोड अथवा ऋणोद तथा प्लेट 'प' को एनोड अथवा धनोद कहते हैं। गर्म ऋणोद से ऋणाणु निकलते हैं। इनको धनोद आकर्षित कर लेता है। यह ऋणाणु ऋणोद से धनोद तक बेतार ही पहुँच जाते हैं। यहीं से बेतार का जन्म हुआ। इस प्रकार के यंत्र को द्विपुटी वाल्व कहते हैं। आजकल वेष्टन को गर्म करके ऋणाणु नहीं निकाले जाते हैं। क्योंकि इसको गर्म करने के लिए बैटरी काफी शक्ति की चाहिये, फलतः अब वेष्टन 'क' को ऋणात्मक

गर्म करते हैं परन्तु उसके ऊपर टंगस्टन धातु की एक पत्ती रहती है जो 'क' ऋणोद का काम करती है। इसमें से तनिक गर्म करने से ही ऋणाणु निकलने लगते हैं। जैसा उसी के पास वाले चित्र में है। दोनों द्विध्रुवी वाल्व ही हैं। दोनों में विद्युत् धारा तभी तक चलेगी जब तक प्लेट 'प' का विभव अधिक होगा अर्थात धनात्मक रहेगा, फलतः यह यंत्र विद्युत् को 'क' से 'प' की ओर ही जाने देती है अन्यथा नहीं। इस कारण इसको वाल्व कहते हैं जैसा ऊपर बताया गया है। इस ऋणोद को फिलामेन्ट भी कहते हैं। अब अधिकतर फिलामेन्ट वाले ही वाल्व काम में आते हैं क्योंकि इनमें से कम गर्म करने पर ऋणाणु निकलने लगते हैं। इस वाल्व को बनाने में सर्व प्रथम श्री फ्लेमिंग ने सफलता प्राप्त की थी।

त्रिध्रुवी वाल्व
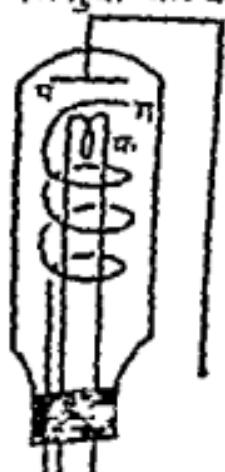
कुछ समय पश्चात् श्री डी० फोरेस्ट ने धनोद तथा ऋणोद के मध्य में एक तार की वेष्टन 'ग' लपेट कर उसका एक सिरा वाल्व से बाहर निकाल लिया। इसका दूसरा ऊपरी सिरा स्वतंत्र रहता है, केवल दृढ़ता हेतु एक कांच की छड़ से जोड़ देते हैं कि हिलकर टूट न जाय। इस वेष्टन 'ग' को ग्रिड कहते हैं। यदि ग्रिड पर धनात्मक विद्युत् लगा दी जाय तो ऋणोद के पास होने के कारण यह ऋणाणुओं को अधिक आकर्षित करता है, फलतः ऋणाणुओं की संख्या तथा वेग तीव्र हो

जाता है और प्लेट धारा अधिक हो जाती है। इन वाल्वों में प्लेट को पहले न्यून विद्युत् देने पर भी तथा ग्रिड को इससे भी न्यून विभव देने पर प्लेट धारा की मात्रा अत्यधिक हो जाती है। वाल्व के इस गुण को संवर्धन कहते हैं तथा ऐसे वाल्व को विद्युत् संवर्धक अर्थात् एम्प्लीफायर कहते हैं। इस वाल्व को ट्रायड अर्थात् त्रिध्रुवी कहते हैं क्योंकि इसमें तीन पात्र, धनोद, ऋणोद तथा ग्रिड होते हैं। यह वाल्व कई अन्य कामों में भी आता है। तीन से अधिक बहुध्रुवी वाल्व भी होते हैं जो विभिन्न कार्यों में लाभदायक होते हैं।

इन वाल्वों में विद्युत् धारा ऋणोद से धनोद तक तभी तक चलती है जब तक प्लेट पर धनात्मक विद्युत् लगाते हैं, फलतः यह विद्युत् को एक ही दिशा में जाने देता है। यदि प्लेट में ए० सी० अर्थात् चल विद्युत् लगा दें तो जब प्लेट इस ए० सी० से धनात्मक होगी तभी ऋणोद से धनोद को विद्युत् जावेगी। जब प्लेट इस ए० सी० के कारण ऋणात्मक होगी तो यह धारा बन्द हो जावेगी फलतः विद्युत् एक ही दिशा में चलेगी। इस प्रकार ए० सी० से डी० सी० अर्थात् चल विद्युत् से सरल एकदिशक विद्युत् बना लेते हैं। इस कार्य में इस वाल्व का नाम रेक्टीफायर कहलाता है। इसी को तीव्र चल अर्थात् उच्च कम्पनांक की ए० सी० उत्पन्न करने के भी काम में लेते हैं, उस समय इस वाल्व को ऑस्लिटर कहते हैं। यही वाल्व चलनी का भी काम देता है। जब दो मिश्रित विद्युत् धाराएं इस वाल्व में से पास करते हैं तो यह एक को रोक कर दूसरी धारा को आगे चला जाने देता है। इस कार्य में इसको सरलकारक अर्थात्

डिटेक्टर कहते हैं। इसके विपरीत यह दो विभिन्न धाराओं को मिश्रण करके एक धारा बना देता है इस समय उसको मिश्रणकर्ता, कम्पनांक परिवर्तक, माडुलेटर अर्थात् आरोहक कहते हैं।

पानी पर तरंगें सबने देखी है परन्तु वायु में नहीं, क्योंकि वायु सूक्ष्म होने के कारण वायु कम्पन दिखाई नहीं देते हैं। वायु तरंगों को आप अनुभव कर सकते हैं। वायु का अस्तित्व इसके स्पर्श से होता है। इसी प्रकार विद्युत् का अनुभव उसके कार्य प्रभाव से होता है। विद्युत् एक प्रकार की ऊर्जा है। यह केवल यंत्रों से ही अनुभव की जा सकती है।

आप पढ़ चुके हैं कि ध्वनि को माइक्रोफोन विद्युत् धारा में परिवर्तित कर देता है। यह विद्युत् धारा अत्यन्त क्षीण होती है फलतः इसको उपरोक्त वाल्व में प्रवेश कराकर संवर्धन कर लेते है तो यह धारा शक्तिशाली हो जाती है। इस प्रकार के वाल्व क ध्वनि संवर्धक कहते हैं। परन्तु इसकी शक्ति इतनी नहीं होती है कि दूर तक जा सके अर्थात् दूर देश की यात्रा कर सके। इस कारण इसको घोड़े की सवारी अर्थात् आरोहण की आवश्यकता होती है कि यह दूर-दूर प्रसारित हो सके। इस प्रसारण यंत्र को ट्रांसमीटर अर्थात प्रसारक कहते हैं। इसमें घर से विद्युत व्यय करनी पड़ती है, जैसे एंजिन को कोयला पानी देने से रेलगाड़ी चलती है। यह घर की विद्युत धारा इस प्रसारक के प्रथम वाल्व में प्रवेश करके उच्च कम्पनांक में परिवर्तित हो जाती है। इस वाल्व को ऑसिलेटर कहते हैं। इसके

पश्चात् यह धारा दूसरे वाल्व में प्रवेश करती है तो इसकी शक्ति अधिक हो जाती है। इस वाल्व को उच्च कम्पनांक संवर्धक कहते हैं। अब यह उच्च कम्पनांक धारा घोड़े अर्थात् वाहन का काम देती है। इसे कैरियर-वेव अथवा वाहन तरंग कहते हैं। इस पर चढ़कर ध्वनि संवर्धित धारा दूर दूर जा सकती है। आप जानते हैं कि जब तक घोड़े को उचित शिक्षा नहीं दी जाती है वह उचित चाल से

अच्छा काम नहीं कर सकता है। संवर्धक में धारा को प्रवेश कराने का यह अर्थ होता है कि इस धारा को घोड़े के समान प्रशिक्षण मिल जाय फलतः वह दूर देश की यात्रा करने में सफल हो जाती है। अब यह दोनों धाराएं, एक ध्वनि संवर्धित धारा तथा दूसरी उच्च कम्पनांक धारा, एक वाल्व के अन्दर साथ साथ प्रवेश की जाती हैं। इस वाल्व को यहां पर माडुलेटर कहते हैं। अब यह दोनों २५

[illegible] के निकलती है जो एक घुड़सवार के समान होती है। इ[illegible] को ध्वनि आरोहित करते हैं। तत्पश्चात् यही [illegible] [illegible] द्वारा करके [illegible] की शक्तिशाली धारा बन जाती है। इसका अर्थ यह हुआ कि अब अपना घुड़सवार इस [illegible] होता है कि वह दूर देश की यात्रा कर सके। इस धारा को एरियल में भेजने पर यहीं आरम्भ होती रहती है। यही संसार में प्रसारित होती रहती है। [illegible] की विद्युत् लहरों से अथवा हमारे घर में जो [illegible] से आती है, उसको रेडियो में लगाते हैं।

जिस प्रकार किसी निर्बल टट्टू को कितना ही खिलाया पिलाया जाय परन्तु वह "ढाक के रहेंगे तो तीन पात ही" वाली कहावत ही रहता है। यह ध्वनि संवर्धित धारा इतनी शक्तिशाली कभी भी नहीं बन पाती कि स्वयं ही संसार में प्रसारित हो सके। इसे तो शक्तिशाली घोड़े की ही आवश्यकता रहती। यदि केवल आरोहण तरंग ही प्रसारित करदी जाय तो अर्थ यह होगा कि कार्ड तो भेज दिया, परन्तु उस पर समाचार कुछ नहीं लिखा, यह केवल निरर्थक ही होगा। घोड़ा तो भेज दिया परन्तु सवार लापता, समाचार कौन देगा। फलतः सवार तथा घोड़े दोनों की आवश्यकता है। यही ध्वनि आरोहित तरंगें एरियल से प्रसारित करते हैं। मार्ग में जो चाहे घुड़सवार को रोककर गाने, संवाद तथा समाचार सुन सकता है। इसी प्रकार एरियल से यह प्रसारित तरंगे ग्रहण करके गाने, संवाद तथा समाचार ग्रहण किये जाते हैं। इस प्रसारण हेतु रेडियो

केन्द्र नगर से बाहर दूर स्थित होते हैं। परन्तु गाने, संवाद तथा समाचार भेजने का केन्द्र नगर में ही होता है कि भाग लेने वाली जनता को कष्ट न हो। इस केन्द्र से रेडियो केन्द्र तक यह गाने इत्यादि तारों द्वारा भेजे जाते हैं। रेडियो केन्द्र पर से यह प्रसारित किये जाते हैं।

तालाब में यदि कोई लकड़ी गाड़ी है तो जल तरंगें उस पर आकर टकराती रहेंगी, फलतः यह लकड़ी इनकी शक्ति को ग्रहण करती रहेगी। इसी प्रकार जब यह प्रसारित तरंगें किसी एरियल से टकराती हैं तो उसमें विद्युत् धारा उत्पन्न होती है। एरियल से एक तार लेकर रेडियो ग्राहक में लगा देते हैं तो यह गाने, संवाद तथा समाचार सुनाता रहता है।

इस प्रकार रेडियो से गाने, संवाद तथा समाचार प्रसारित करने को ब्राडकास्टिंग अर्थात् ध्वनि प्रसारण कहते हैं। इसे प्रसारण केन्द्र अर्थात् ब्राड-कास्टिंग स्टेशन कहते हैं। रेडियो तरंगे भेजने वाले संपूर्ण यंत्र को ट्रांसमीटर अर्थात् ध्वनि प्रसारक कहते हैं। प्रत्येक केन्द्र की कम्पनांक संख्या तथा तरंग-लम्बाई भिन्न होती है। प्रत्येक की संख्या रेडियो ग्राहक पर अंकित होती है। ग्राहक की सुई को घुमा कर जिस संख्या पर कर देंगे उसी केन्द्र के संवाद आदि सुनाई पड़ेंगे फलतः एरियल रेडियो ग्राहक का द्वार है। यह एरियल प्रसारण में भी बाहर जाने का द्वार है। इसी पथ से दूर सवार प्रवेश कर सकता है। यह एरियल प्रायः छत पर लगा होता

है। कोई कोई अपना एरियल कमरे में भी लगा लेते हैं। किसी किसी रेडियो ग्राहक में एरियल उसी के अन्दर लगा होता है। परन्तु एरियल होता अवश्य है।

जब एरियल से क्षीण विद्युत् धारा रेडियो ग्राहक में प्रवेश करती है तो शक्तिहीन होती है। यह संवाद देने में निर्बल होती है कारण यह है कि घुड़सवार अत्यन्त लम्बी यात्रा करके आता है उस समय उसको बोलने की तो क्या, घोड़े से उतरने तक की सामर्थ्य नहीं होती है। फलतः इसको जलपान कराकर शक्तिशाली [illegible] अर्थ [illegible] कि इस क्षीण धारा को रेडियो [illegible] कर शक्ति प्रदान करते हैं। [illegible] धारा लगाते हैं। यह सं [illegible] [illegible] की धारा

बन जाती है। अब रेडियो संवर्धक की धारा तथा इस उच्च कम्पनांक धारा को कम्पनांक परिवर्तक में पास होती है। इस वाल्व को सरलकारक अथवा डिटेक्टर कहते हैं। यहां से जो विद्युत् धारा निकलती है वह कुछ न्यून कम्पनांक की होती है। इसे कतरिक संवधक वाल्व में प्रवेश करा कर अर्थात् इस प्रकार जलपान कराकर शक्तिशाली बना लेते हैं। अब यह वाहन तरंग से ध्वनि तरंग पृथक होने के लायक हो जाती है। अर्थ यह है कि अब सवार घोड़े से उतने योग्य हो जाता है। इसमें ध्वनि विद्युत् तरंगें तथा वाहन तरंगें मिश्रित रहती हैं। अब यह मिश्रित तरंगें माडुलेटर में प्रवेश करती हैं। इसका कार्य यह है कि यह एक संकुचित द्वार के समान है जिसमें से केवल सवार ही अर्थात् ध्वनि विद्युत तरंगें ही आगे आ सकती हैं तथा घोड़ा अर्थात् वाहन तरंगें उसी में विलीन हो जाती हैं। अब यह ध्वनि तरंगें एक द्वितीय सरलकारक में प्रवेश करके सरल विद्युत् अर्थात् एक दिशात्मक बन जाती हैं। पुनः इस विद्युत् को एक ध्वनि संवर्धक में प्रवेश करा कर शक्तिशाली बना लेते हैं। यही ध्वनि प्रसारक में जाकर आपको गाने, संवाद तथा समाचार सुनाती रहती है। यह सरल कहानी ध्वनि प्रसारण की है, परन्तु अब तो संवाददाता तथा गायक का चित्र भी रेडियो से प्रसारित किया जाता है। इस क्रिया को टेलीविजन कहते हैं जो आगे पाठ में वर्णित है।

है। कोई कोई अपना एरियल कमरे में भी लगा लेते हैं। किसी किसी रेडियो ग्राहक में एरियल उसी के अन्दर लगा होता है। परन्तु एरियल होता अवश्य है।

जब एरियल से क्षीण विद्युत् धारा रेडियो ग्राहक में प्रवेश करती है तो शक्तिहीन होती है। यह संवाद देने में निर्बल होती है। कारण यह है कि घुड़सवार अत्यन्त लम्बी यात्रा करके आता है, उस समय उसको बोलने की तो क्या, घोड़े से उतरने तक की सामर्थ्य नहीं होती है। फलतः इसको जलपान कराकर शक्तिशाली बनाया जाता है, अर्थ यह है कि इस क्षीण धारा को रेडियो कम्पनांक संवर्धक वाल्व में प्रवेश करा कर शक्ति प्रदान करते हैं। अपने रेडियो ग्राहक में घर की विद्युत धारा लगाते हैं। यह सर्व प्रथम ऑसिलेटर वाल्व में प्रवेश होकर उच्च कम्पनांक की धारा

बन जाती है। अब रेडियो संवर्धक की धारा तथा इस उच्च कम्पनांक धारा को कम्पनांक परिवर्तक में पास होती है। इस वाल्व को सरलकारक अथवा डिटेक्टर कहते हैं। यहां से जो विद्युत् धारा निकलती है वह पुनः न्यून कम्पनांक की होती है। इसे कतरिक संवर्धक वाल्व में प्रवेश करा कर अर्थात् इस प्रकार जलपान कराकर शक्तिशाली बना लेते हैं। अब यह वाहन तरंग से ध्वनि तरंग पृथक होने के लायक हो जाती हैं। अर्थ यह है कि अब सवार घोड़े से उतरने योग्य हो जाता है। इसमें ध्वनि विद्युत् तरंगें तथा वाहन तरंगें मिश्रित रहती हैं। अब यह मिश्रित तरंगें माडुलेटर में प्रवेश करती हैं। इसका कार्य यह है कि यह एक संकुचित द्वार के समान है जिसमें से केवल सवार ही अर्थात् ध्वनि विद्युत तरंगें ही आगे जा सकती हैं तथा घोड़ा अर्थात् वाहन तरंगें उसी में विलीन हो जाती हैं। अब यह ध्वनि तरंगें एक द्वितीय सरलकारक में प्रवेश करके सरल विद्युत् अर्थात् एक दिशात्मक बन जाती है। पुनः इस विद्युत् को एक ध्वनि संवर्धक में प्रवेश करा कर शक्तिशाली बना लेते हैं। यही ध्वनि प्रसारक में आकर आपको गाने, संवाद तथा समाचार सुनाती रहती है। यह सरल कहानी ध्वनि प्रसारण की है. परन्तु अब तो संवाददाता तथा गायक का चित्र भी रेडियो से प्रसारित किया जाता है। इस क्रिया को टेलीविज़न कहते हैं जो आगे पाठ में वर्णित है।

टेलीविज़न

इस कला में कई देश पर्याप्त उन्नति कर चुके हैं। हर्ष की बात है कि दिल्ली में भी टेलीविज़न आरम्भ हो गया है। इससे वक्ता का भाषण भी सुनो तथा उसका चित्र भी देखते जाओ कि वह किस प्रकार हावभाव दिखाता है, फलतः यह कुछ कुछ ध्वनि चल-चित्र के समान है। संवाद, गाने तथा समाचार तो रेडियो से आप सुनते ही रहते हो परन्तु वक्ता की मोहनी मूरत देखने से वंचित रह जाते हो, इस अभाव को टेलीविज़न पूरा करता है। टेलीविज़न वक्ता तथा उसके भाषण दोनों को ही हमारे सामने उपस्थित कर देता है। यदि शास्त्रीजी किसी संस्था में भाषण दे रहे हैं, अथवा उद्‌घाटन कर रहे हैं तो टेलीविज़न उस दृश्य को हमारे सामने पर्दे पर लाकर रख देता है। पात्र की ध्वनि तो साधारणतया आकाशवाणी से प्रसारित हो जाती है, केवल उसका चित्र भेजना शेष रह जाता है, फलतः पात्र की ध्वनि तथा चित्र को साथ साथ रेडियो से भेजने को टेलीविज़न कहते हैं। इस कारण रेडियो का प्रबन्ध तो आवश्यक है ही, रेडियो से चित्र भेजने का प्रबन्ध और करना पड़ता है।

सिनेमा में प्रथम पर्ल-चित्र पट्टी बनाकर पुनः चित्रों को पर्दे पर डालते हैं, परन्तु टेलीविज़न में प्रत्येक चित्र उसी क्षण बनाना तथा प्रसारित करना पड़ता है। टेलीविज़न का कैमरा चित्र बनाता भी जाता है तथा रेडियो से प्रसारित भी करता जाता है। माना कि आपको उपरोक्त चित्र टेलीविज़न करना है। यदि एक प्रकाश बिन्दु अ से ब तक इस चित्र पर एक रेखा १/५० सेकिन्ड में काट जाय तो देखने वाले को दृष्टि-हठ के कारण बिन्दु न दिखाई पड़ेगा परन्तु एक रेखा अ ब ही प्रतीत होगी। पुनः यदि यही बिन्दु दूसरे क्षण अ ब से कुछ नीचे दूसरी रेखा स द उसी प्रकार से चित्र पर काट जाय तो आपको दो पृथक रेखाएँ दिखाई पड़ेंगी। यदि यह चित्र सेलूलाइड अथवा कांच की पट्टी पर बना हो तो यह रेखाएँ दूसरी तरफ भी दिखाई पड़ेंगी। यह रेखाएँ विभिन्न चमक की होंगी क्योंकि इस पट्टी पर बने चित्र की श्यामलता प्रत्येक स्थान पर समान नहीं है। फलतः चित्र की श्यामलता की गहराई की विभिन्नता के कारण इन रेखाओं की चमक भी उसी प्रकार से न्यूनाधिक होगी। अब यदि यह दोनों रेखाएँ केवल १/५० सेकिन्ड में ही बने तथा दोनों अत्यन्त समीप हों तो पृथक पृथक दिखाई न देकर केवल एक मोटी सी प्रकाश की रेखा दिखाई देगी। इसकी चमक तथा श्यामलता चित्र की श्यामलता पर निर्भर होगी। यदि ...र सम्पूर्ण चित्र पर २०० रेखायें १/१ सेकिन्ड में यही

प्रकाश बिन्दु काट जावे तो हमको एक मोटी चौड़ी पट्टी दिखाई पड़ेगी। इसकी चमक तथा श्यामलता चित्र की श्यामलता पर निर्भर होगी। अर्थ यह हुआ कि यह चौड़ी पट्टी एक अपूर्ण चित्र सा प्रतीत होगी, परन्तु साफ नहीं होगा। फलतः यही प्रकाश बिन्दु १ सेकिन्ड में ४० बार चित्र पर रेखाएँ काट जाता है अर्थात् १ सेकिन्ड में २०० रेखाएं काट जाता है। इस प्रकार एक सेकिन्ड में १०००० रेखाएँ चित्र पर फिर जाती हैं तो चित्र साफ दिखाई पड़ता है। इस प्रकार किसी चित्र को प्रकाश बिन्दु से काटने को स्कैनिंग कहते हैं। यह स्कैनिंग टेलीविजन कैमरे से किया जाता है, इसको इकनॉस्कोप कहते हैं।

कैथोड-रे-ट्यूब
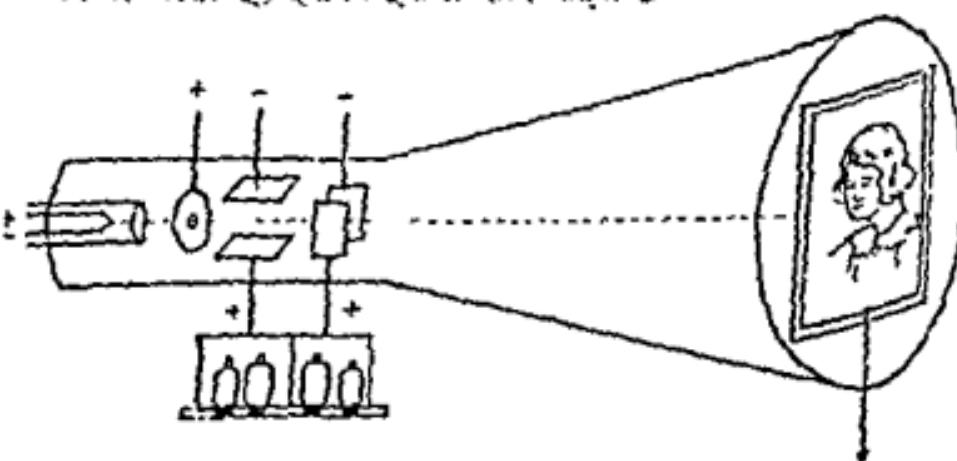
इकनॉस्कोप में एक मुख्य यंत्र होता है, इसको कैथोड-रे-ट्यूब ~ ते है जैसा उपरोक्त चित्र में दिखाया गया है। यह यंत्र , की चिलम के समान होता है। इसका चौड़ा भाग भी कांच का बना होता है, इसका व्यास ३ से १६ इंच तक होता है।

इसकी लम्बाई व्यास से दो तीन गुनी होती है। इसके पतले भाग में एक त्रिकोना तार लगा होता है। इसके दोनों सिरों को किसी बैटरी के धन व ऋण ध्रुवों से जोड़ देते हैं तो यह साधारण बिजली की बत्ती के समान गर्म हो जाता है। यह तार टंगस्टन का होता है, फलतः इसमें से ऋणाणु निकलने लगते हैं। इसके ऊपर धातु का एक बेलन होता है जिसके मुंह पर एक सूची छिद्र होता है। इस सूची छिद्र में से ऋणाणु निकलने से एक प्रकाश रेखा सी बन जाती है। कैथोड-रे ट्यूब के चौड़े भाग में धातु की एक पट्टी लगी होती है इससे एक तार कांच से बाहर निकाल लेते हैं। इस धातु की पट्टी पर अबरक अर्थात् भोडल का एक पतला परत लगा होता है। इस भोडल पर सीसियम धातु का लेप रहता है। जब यह ऋणाणु किरण इस लेप पर पड़ती है तो इसमें से फोटो-सेल के समान विद्युत उत्पन्न होती है। इस नवजात विद्युत् धारा को तार से सम्वर्धक में प्रवेश करते हैं तो यह शक्तिशाली बन जाती है। अब इसको रेडियो से प्रसारित करते हैं। इस सम्पूर्ण यंत्र को चित्र प्रसारक कहते हैं।

कैथोड-रे-ट्यूब के अन्दर दो पट्टिकायें स्थित कर लगी होती हैं। इनमें चल विद्युत धारा लगाने से प्रत्येक पट्टी कभी धन कभी ऋण होती रहेगी, फलतः यह ऋणाणु किरण कभी एक कभी दूसरी पट्टिका की तरफ आकर्षित होती रहेगी और प्रकाश बिन्दु भी गतिशील होता रहेगा। इस चल बिन्दु के कारण सीसियम के लेप पर रेखायें बनती रहेंगी। इस बिन्दु की गति पट्टि-

फार्श्वों पर लगे चल विद्युत् पर निर्भर है। इन पट्टिकाओं के बाद परन्तु समकोण पर दो अन्य लम्बवत् पट्टिकायें और लगी हैं। इन पर भी चल-विद्युत् लगा दी जाती है तो अणुत किरण इनके प्रभाव से भी गतिशील होती है। फलतः क्षितिज पट्टिकायें प्रकाश विन्दु को लम्बवत् तथा लम्बवत् पट्टिकायें विन्दु को क्षितिज दिशा में चलायमान करेंगी। इस प्रकार लम्बवत् पट्टिकाओं के प्रभाव से प्रकाश विन्दु सीमियम के लेप पर क्षितिज रेखाएँ काटता रहेगा और दूसरी जोड़ी क्षितिज पट्टिकायें इस विन्दु को ऊपर नीचे करेंगी, फलतः स्कैनिंग होता रहेगा। इस प्रकार की चल विद्युत् विशेष यंत्रों से नियंत्रित होती है इनको टाइमबेस कहते हैं। यह कैथोड-रे-ट्यूब के साथ नीचे लगी रहती हैं। एक टाइमबेस तीव्र गतिशाली तथा द्वितीय मध्यम गति की विद्युत् धारा उत्पन्न करती है। तीव्र गतिशाली टाइमबेस लम्ब जोड़ी पट्टिकाओं से जुड़ी होती है। इस टाइमबेस में आरी के दांतों के समान विद्युत् धारा उत्पन्न होती है जो शनैः शनैः बढ़कर एक विशेष मात्रा तक बढ़कर एकदम बन्द हो जाती है तथा पुनः शून्य से शनैः शनैः बढ़ना प्रारम्भ हो जाता है, फलतः कैथोड-रे-ट्यूब में अणुत किरण बायें से दायें अ से ब तक चित्र पर चलायमान बनी रहती है। दूसरा टाइमबेस भी इसी प्रकार कार्य करती है परन्तु इसकी विद्युत् धारा मध्यमगति की होती है, यह क्षितिज पट्टिकाओं पर लगी रहती है, जो अणुत किरण को दायें से बायें अ पर परन्तु कुछ नीचे खींचकर कर देती है पुनः बन्द हो जाती है। इसी क्षण लम्ब पट्टिकायें अणुत

किरण को बायें से दायें म से द तक खींच ले जाती हैं तथा यह भी बन्द हो जाती हैं तो पुनः क्षितिज पट्टिकायें इसे बायें स्थान पर पहुंचा देती हैं। यही टाइमबेस अणुणानु किरण को अन्तिम रेखा समाप्त करने के बाद ही पुनः बायें स्थान अ पर फेंक देती हैं। इस प्रकार यंत्रों से स्वतः स्कैनिंग होता रहता है।
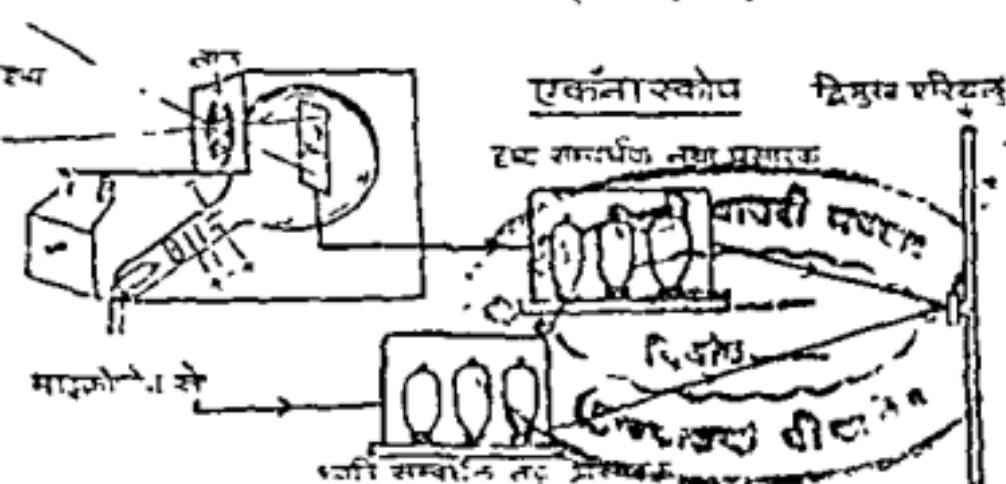
जिस प्रकार चित्र लेने वाले कैमरे में लगे ताल से दृश्य को कैमरे की पट्टी पर केन्द्रित करके पुनः चित्र खींचते हैं, इसी प्रकार जिस दृश्य को टेलीविजन करना होता है उसको इकनॉस्कोप में लगे ताल से सीसियम के लेप पर केंद्रित करते हैं। इस पर अणुणानु किरण स्कैनिंग करती है। सीसियम फोटो सेल के समान अणुणानु निकालती है जो तार के द्वारा सम्वर्धक में जाकर शक्ति प्राप्त करते हैं पुनः दृश्य प्रसारक से एरियल से प्रसारित करते हैं।

इसी समय अभिनय के साथ साथ जो गाने व संवाद होते हैं वह माइक्रोफोन से ध्वनि सम्वर्धक तथा प्रसारक में से एरि-

दश से रेडियो के समान प्रसारित किये जाते हैं। यहां यह है कि चित्र तथा संवाद दोनों को पहले विद्युत में परिवर्तित करते हैं पुनः एरियल से प्रसारित करते हैं। इस प्रकार दोनों को प्रसारित करने के लिए दो एरियल होते हैं। यह एरियल [illegible] फीट [illegible] होती है। इनके मध्य में से एक तार ले जाकर लगा देते हैं।

टेलीविजन ग्राहक
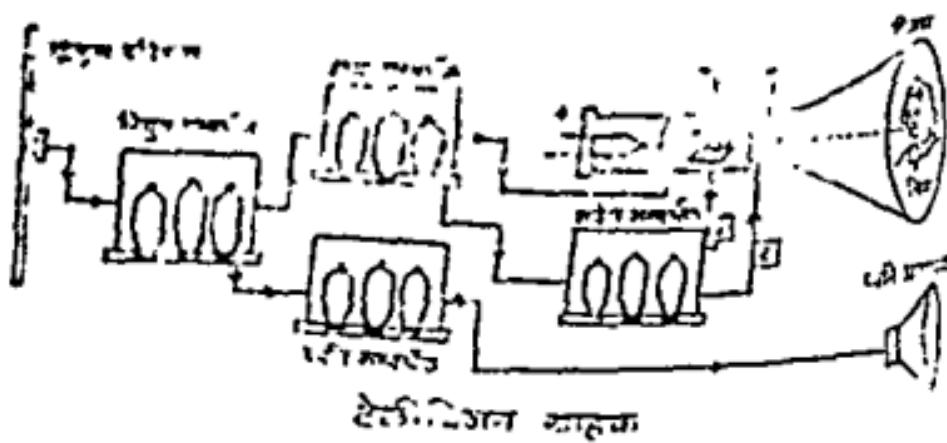
ग्रहण स्थान पर भी दो एरियल होते हैं जैसा चित्र में दिखाया गया है। इसके मध्य में से एक तार ले जाकर विद्युत सम्वर्धक में लगा देते हैं। यहां से एक भाग दृश्य सम्वर्धक तथा तथा दूसरा ध्वनि सम्वर्धक में जाता है। ध्वनि सम्वर्धक से ध्वनि प्रसारक से गाने तथा संवाद आते रहते हैं। चित्र भाग कैथोड-रे-ट्यूब में आकर चित्रपट पर चित्र बनाता है। कैथोड-रे-ट्यूब के चौड़े भाग पर सीसियम तथा मोडल की पट्टिका नहीं होती है, परन्तु इस चौड़े कांच के भाग पर रसायनिक लेप रहता है जो ऋणाणु किरण के प्रभाव से चमकता है, तथा चित्र बनाता है।

टेलीविज़न यन्त्र
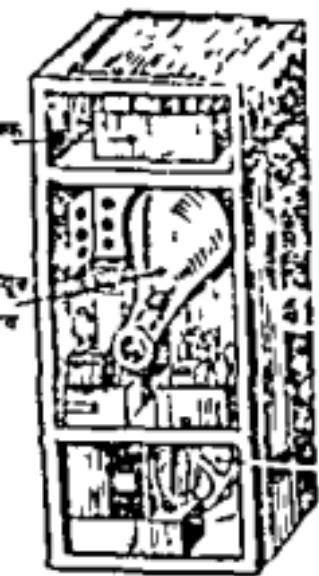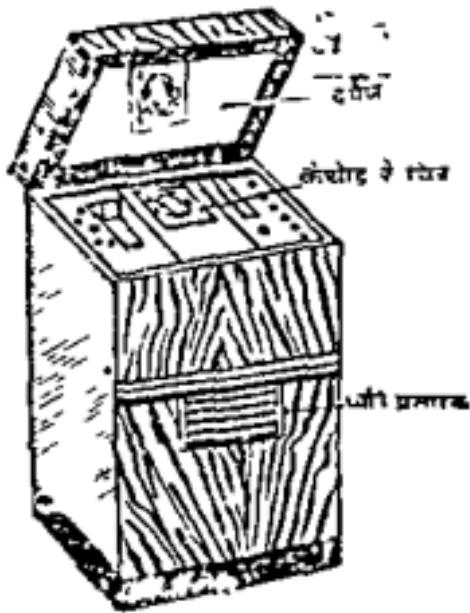
पृष्ठ मुख्य

इस यंत्र को कीनोस्कोप कहते हैं, फलतः कीनोस्कोप टेलीविजन का ग्रहण यंत्र है। इस पर चित्र दिखाई पड़ता है तथा यह चित्रपट का काम करता है। यही टेलीविजन का पर्दा है।

इस कैथोड-रे-ट्यूब में भी दोनों प्रकार की क्षितिज व लम्ब पट्टिकायें होती हैं। दृश्य सम्वर्धक से एक तार संकेत सम्वर्धक में जाता है। यहां से एक एक तार दोनों टाइमबेस में जाता है जो दोनों जोड़ी पट्टिकाओं में लगा होता है। इन दोनों टाइमबेस की सुई को घुमाकर रेडियो के समान चित्र को ठीक अर्थात् केन्द्रित करते हैं कि चित्र तथा ध्वनि में समगति तथा समभाव रहे। इस का अर्थ यह है कि प्रसारण तथा ग्रहण केन्द्रों पर स्कैनिंग समान

रहे। इसको ठीक करने के लिए प्रसारण केन्द्र से रेडियो संकेत प्रति रहते हैं तो ग्रहण केन्द्र पर टाइमबेस को नियंत्रित कर लय तथा ध्वनि को समगति तथा समभाव कर लेते हैं।

टेलीविजन रंगबिरंगा भी होता है जैसा कि चलचित्र की रंगीन फिल्में होती हैं। इसमें अणु किरण को लाल, हरे तथा नीले रंगों के कांच में से छान कर पुनः स्कैनिंग करते हैं।

रेडियो तथा टेलीविजन केवल जनता के मनोरंजन के ही साधन नहीं हैं। इनका उपयोग अनेकों सैनिक तथा राजनीतिक कार्यों में भी होता है, परन्तु इससे भी अधिक महत्व का उपयोग राडार का है जो रेडियो का दूसरा रूप है। इसका आगे पाठ में वर्णन है।

राडार

राडार (Radar) नाम रेडियो डायरेक्शन फाइन्डिंग एण्ड रेंजिंग (Radio Direction finding and Ranging) का लघुरूप है। रेडियो का रा डायरेक्शन फाइन्डिंग का डा, एण्ड का ए (and) तथा रेंजिंग का र लेकर राडार शब्द बनाया गया है। इसी शब्द से इस उपवाक्य का अर्थ पूर्णतया दरशाया जा सकता है क्योंकि इस उपवाक्य का अर्थ है कि रेडियो द्वारा किसी वस्तु की दिशा तथा दूरी ज्ञात करना। समस्या यह है कि अदृश्य वस्तु को दृष्टि करना। इतना ही परियाप्त नहीं होता है कि जो वायुयान हमसे अत्यन्त दूरी पर है, न दृष्टि पड़ता है, न कुछ सुनाई देता है उसका पूर्ण रीति से ज्ञान करना कि वह हमसे कितनी दूरी, किस दिशा तथा किस ऊंचाई पर उड़ रहा है। अर्थ यह है कि उस वस्तु का ठीक ठीक स्थान ज्ञात करना, जिसको हम देख ही नहीं सकते हैं। यह कार्य एक विद्युत् यंत्र से होता है। यह यंत्र एक विद्युत् लहर फेंकता है। जब यह लहर किसी भी वस्तु से टकराती है तो पुनः लौट आती है। इसके जाने तथा लौटने का समय मापा जाता है। इससे वस्तु के स्थान की दूरी व

मील प्रति सेकिन्ड है। यदि समय की सेकिन्ड संख्या तथा इस का गुणा कर दिया जाय तो उस वस्तु तक के जाने आने की दूरी ज्ञात हो जाती है तथा उस वस्तु की भी दूरी ज्ञात हो जाती है। परन्तु जाने आने का समय इतना न्यून होता है कि साधारणतया कोई घड़ी नहीं माप सकती है। इस समय को एक विशेष विद्युत् यंत्र से नापते हैं। सन् १६२४ में सर्वप्रथम राडार यंत्र बनाया गया। ब्रिटेन वाले इसे पहले रेडियो-लोकेशन कहते थे। पुनः अमेरिका के संयुक्त राष्ट्र के सहयोग से अनुसंधान करते करते राडार नाम प्रयोग मे आने लगा। राडार में तीन भाग होते हैं। एक तरंगें भेजने वाला तरंग प्रसारक, द्वितीय तरंगें पकड़ने वाला तरंग ग्राहक तथा तीसरा कैथोड्-रे-आसिलोग्राफ। यह एक विद्युत् नली है जो विद्युत् कण फेंकती है। इसका विवरण टेलीविजन अध्याय में है। राडार का संपूर्ण रूप से उपयोग सन् १६३७ मे हुआ। रेडियो तरंगें किस प्रकार उत्पन्न करके भेजी जाती हैं यह रेडियो के पाठ में बताया गया है। यह तरंगें एक के बाद एक छोड़ी जाती हैं कि प्रत्येक मे सम समय का अन्तर रहे। इस अन्तर समय में कोई तरंग नहीं होती है अर्थात् प्रसारक बन्द रहेगा। यह तरंगें एक के बाद एक एरियल में भेजी जाती हैं कि यह सब दिशाओं में न फैलकर केवल एक ही विशेष दिशा में रहें। कुछ दूरी पर रेडियो ग्राहक रहता है। जो तरंग किसी वस्तु से टकराकर आती है उसको यह ग्रहण कर लेता है। यहां से यह कैथोड-रे-ट्यूब में जाती है और दोनों लम्ब प्लेट में जोड़ दी जाती

दिशा ज्ञात की जाती है। इसमें अनेकों बाधाओं का सामना करना पड़ता है, कारण यह है कि वायुयान प्रथम तो चलता रहता है और वह भी तीव्र गति से, द्वितीय यह है कि इसको देख नहीं पाते हैं। पुनः भी इसकी दिशा व दूरी ज्ञात करनी परम आवश्यक हो गई है। राडार में विशेष उन्नति पिछले विश्व महायुद्ध में अधिक हुई जब कि शत्रु के गोलाबारी करने वाले वायुयानों का पता लगाना अत्यन्त आवश्यक था कि उनका सामना किया जाय तथा भगा दिया जाय और उनका आना ज्ञात करके जनता को सतर्क कर दिया जाय कि संकट आने वाला है।

सर्वप्रथम एक जर्मन वैज्ञानिक महाशय हर्ट्ज ने रेडियो तरंगें उत्पन्न करने में सफलता प्राप्त की थी। उस समय वह केवल अपने कमरे में ही इनको भेज सके थे। तत्पश्चात् मारकोनी महाशय ने सन् १९०१ ई० में सर्व प्रथम विद्युत् संकेत एटलान्टिक महासागर के पार भेजने में सफलता प्राप्त की थी। यहीं से बेतार का आरम्भ हुआ था।

सन् १८८६ ई० में ही हर्ट्ज महाशय ने प्रयोगों से प्रतिपादित कर दिया था कि यह रेडियो तरंगें किसी वस्तु से टकराकर परावर्तित हो पुनः वापिस आ जाती हैं। इस प्रकार यदि एक ही तरंग एक बार छोड़ कर बन्द कर दी जाय और यह किसी विशेष वस्तु से टकराकर लौट आए तो इसके छोड़ने तथा वापिस आने तक का समय ज्ञात हो सकता है। रेडियो तरंगों की चाल १८६०००

ज्ञात ही रहता है कि कितनी देर पश्चात् देखा गया है। इससे वायुयान की चाल भी ज्ञात हो जाती है।
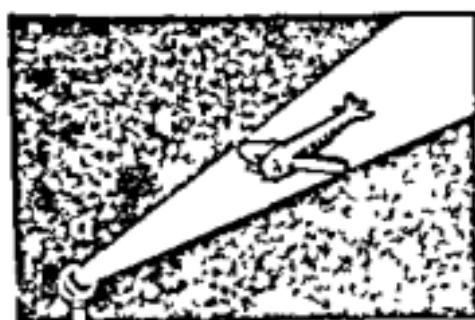
वायुयान की यह सीधी दूरी है जैसा उपरोक्त चित्र में दिखाया गया है। इसके पश्चात् इसकी दिशा कि यह उत्तर से किस दिशा में है, ज्ञात करते हैं। इसको कोण मापक कहते हैं। इसको ज्ञात करने के हेतु एक मुख्य प्रकार का एरियल कार्य में आता है। इसमें कुछ समतल तार समूह उत्तर दक्षिण दिशा में रहते हैं और द्वितीय समूह पूर्व पश्चिम होता है। यह एक एरियल है जिसको दिशा मापक या दिशात्मक एरियल कहते हैं।

यदि केवल एक ही तार सीधा पृथ्वी के समकोण पर खड़ा किया जाय तो इससे सब दिशाओं में पूर्ण रूप से विद्युत् तरंगें प्रसारित होती रहती हैं, जैसा चित्र नं० १ में है। जब दो तार क और ख समानान्तर परन्तु

है। इस प्रकार एक के बाद एक तरंग जाकर प्रकाश बिन्दु को पुनः खींचकर एक ही स्थान तक ले जाती है, प्रत्येक परावर्तित किरण उस बिन्दु को एक ही स्थान तक खींचती है। फल यह होता है कि यह एक छोटी सी रेखा बनाता है तथा इसकी लम्बाई स्थिर रहती है। अर्थ यह है कि यह प्रकाश बिन्दु केवल एक ही स्थान पर आकर रुका रहता है। अब अगर तरंग किसी वायुयान से टकराकर आई तो प्रकाश बिन्दु नं० ७ तक नहीं पहुंचेगा तब परावर्तित किरणें आ जायेंगी। फल यह हुआ कि प्रकाश बिन्दु नं ७ से पहले ही कहीं नं. ४ पर रुक जावेगा। अर्थ यह हुआ कि तरंग को जाने आने में ० से ४ तक का ही समय लगा। कैथोड-रेन्ट्यूब के परदे पर एक रेखा खिंची रहती है इस रेखा पर मीलों के चिन्ह लिखे रहते हैं। किसी विशेष वस्तु की दूरी नाप कर पुनः इससे तरंग टकराकर देखते हैं कि प्रकाश बिन्दु शून्य से कितना दूर जाता है। इसी प्रकार प्रयोग करके इस रेखा पर मीलों के चिन्ह लगा देते हैं। जब यह यंत्र कार्य में आता है तो जहां पर प्रकाश बिन्दु रुकता है उसी चिन्ह को पढ़कर वायुयान की दूरी उसी क्षण ज्ञात हो जाती है कि राडार स्टेशन से वायुयान कितनी दूरी पर है। कुछ समय के पश्चात् उसकी दूरी पुनः ज्ञात करते हैं। इन दोनों का अन्तर मीलों में ज्ञात हो जाता है और समय तो प्रथम

के एरियल से हम केवल एक ही दिशा पश्चिम में विद्युत् तरंगें जाने दे सकते हैं, अन्य दिशा वाले कुछ नहीं पा सकते हैं। इस प्रकार के एरियल को दिशा-एरियल कहते हैं। इसको यदि किसी घूमने वाली चरखी पर बनाया जाय तो उसको घुमाकर हम अपने समाचार तथा अन्य विद्युत् तरंगें किसी भी विशेष दिशा ही में भेज सकते हैं। इसी प्रकार के ग्रहण एरियल भी बनाये जाते हैं कि जिनको घुमा फिरा कर हम देख सकते हैं कि किस दिशा से विद्युत् तरंगें अधिकतम आती हैं।

इसी प्रकार से चौखटेदार एरियल भी बनाते हैं। यह मुख्यतया ग्रहण में काम आते हैं। यह एक तार का समकोण चतुर्भुज होता है। इसका गुण यह है कि जिस समय इसके तार आगंतुक तरंगों के सामानान्तर रहते हैं तो ग्रहण अधिकतम होता है और जब इसका मुंह समकोण पर रहता है तो न्यूनतम ग्रहण रहता है। तीव्र ध्वनि की उच्चतम शक्ति ज्ञान करना कुछ कठिन रहता है। इस कारण न्यूनतम ज्ञात करने में सुगमता रहती है कि जिस स्थान पर न्यूनतम ग्रहण है। इस दिशा के समकोण पर से विद्युत् तरंगें आ रही हैं। बड़े-बड़े भारी एरियल को घुमाना इस प्रकार कुछ आसान नहीं होता है क्योंकि प्रयोग में कुछ कठिनाइयाँ आती हैं। इस कारण दो एरियल प्रयोग में आने लगे। दोनों समकोण चतुर्भुज होते हैं, एक छोटा, दूसरा कुछ बड़ा तथा छोटा बड़े के अन्दर रहता है। एक उत्तर दक्षिण तथा दूसरा पूर्व पश्चिम रहता है। इस प्रकार एक दूसरे के समकोण पर होता
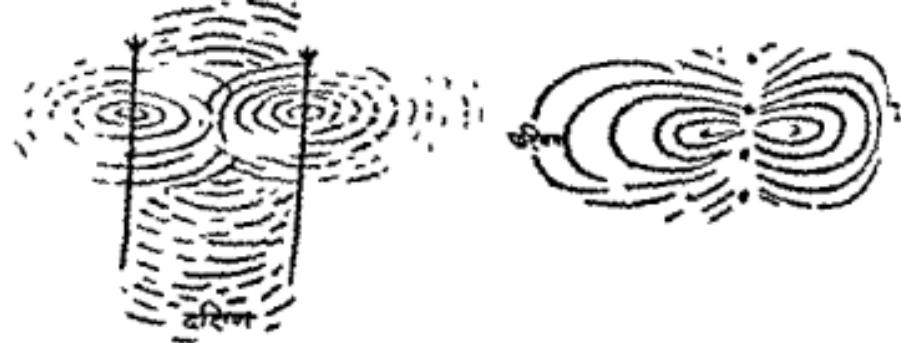
पृथ्वी के समकोण पर खड़े हों जैसा चित्र २ में है तो इनकी रेखा की दिशा में विद्युत् तरंगें न्यूनतम हो जाती हैं तथा उनके समकोण उत्तर दक्षिण की दिशा में अधिकतम जाती हैं। इस प्रकार यदि चार खड़े एरियल समदूरी पर जैसा चित्र नं ३ में हैं, लिये जांय तो पूर्व पश्चिम दिशा में और अधिकतम तरंगें जाती हैं। अर्थ यह है कि चारों एरियल के तारों की रेखा के समकोण पर विद्युत् तरंगें अधिकतम जाती हैं। यदि यह चारों तार उत्तर दक्षिण हों तो विद्युत् तरंगें पूर्व पश्चिम ही जायेंगी और उत्तर दक्षिण में नहीं फैलेंगी। अब यदि चार अन्य एरियल इनके दाहिनी ओर और

खड़े कर दिए जाय तो यह इस जाने वाली तरंगों को रोककर पुनः दाहिनी दिशा से बाईं दिशा को मोड़ देते हैं। इन्हें परावर्तक एरियल कहते हैं। इसका अर्थ यह हुआ कि इस प्रकार

के एरियल से हम केवल एक ही दिशा पश्चिम में विद्युत् तरंगें भेज दे सकते हैं, अन्य दिशा वाले कुछ नहीं पा सकते हैं। इस प्रकार के एरियल को दिशा-एरियल कहते हैं। इसको यदि किसी घूमने वाली धरनी पर बनाया जाय तो उसको घुमाकर हम अपने समाचार तथा अन्य विद्युत् तरंगें किसी भी विशेष दिशा ही में भेज सकते हैं। इसी प्रकार के ग्रहण एरियल भी बनाये जाते हैं कि जिनको घुमा फिरा कर हम देख सकते हैं कि किस दिशा से विद्युत् तरंगें अधिकतम आती हैं।

इसी प्रकार से चौकटेदार एरियल भी बनाते हैं। यह मुख्यतया ग्रहण में काम आते हैं। यह एक तार का समकोण चतुर्भुज होता है। इसका गुण यह है कि जिस समय इसके तार आगत तरंगों के समानान्तर रहते हैं तो ग्रहण अधिकतम होता है और जब इसका मुख समकोण पर रहता है तो न्यूनतम ग्रहण रहता है। तीव्र ध्वनि की उच्चतम शक्ति ज्ञात करना कुछ कठिन रहता है। इस कारण न्यूनतम ज्ञात करने में सुगमता रहती है कि किस स्थान पर न्यूनतम ग्रहण है। इस दिशा के समकोण पर से विद्युत् तरंगें आ रही हैं। बड़े-बड़े भारी एरियल को घुमाना इस प्रकार कुछ आसान नहीं होता है क्योंकि एरियल के कुछ कठिनाइयाँ आती हैं। इस कारण दो एरियल [illegible]। दोनों समकोण चतुर्भुज होते हैं, एक छोटा, दूसरा कुछ बड़ा तथा छोटा बड़े के अन्दर रहता है। [illegible] एरियल तथा दूसरा [illegible] रहता है। इस प्रकार एक दूसरे के समकोण पर [illegible]

चौकोर फ्रेम एरियल

वेष्टन

वेष्टन

है। इनके सिरे एक अन्य
में जोड़ दिए जाते हैं।
यंत्र का नाम है रेडियो कं
मापक। उत्तर दक्षिण चतु
के सिरे एक वेष्टन में जोड़
जाते हैं जो इस कोणमापक
होती है। पूर्व पश्चिम चतुर्भु
के सिरे एक दूसरी वेष्टन
जोड़ दिए जाते हैं। यह दूस
वेष्टन प्रथम के समकोण
रहती है। यह दोनों वेष्टन खड़ी होती हैं। इनके अन्दर ए
तीसरी वेष्टन होती है यह भी खड़ी रहती है परन्तु इच्छानुसा
घुमाई जा सकती है। इसको खोज वेष्टन कहते हैं। यह तीनों
वेष्टन समकोण चतुर्भुज होती हैं। अन्दर वाली खोज वेष्टन प
एक तीर लगा रहता है जो एक घड़ी के मुंह पर घूमता है। इस
पर ३६० डिग्री बनी रहती हैं। इसका शून्य उत्तर में होता है तथा
पूर्व में ९०, १८० दक्षिण तथा २७० पश्चिम में लिखा रहता है।
इस खोज वेष्टन को घुमाने का फल वही होता है जो एरियल
फ्रेम के घुमाने का होता है। उत्तर दक्षिण से आने वाली तरंगों
को उत्तर दक्षिण वाली वेष्टन ग्रहण कर लेती है। जब खोज
वेष्टन इसके अन्दर होती है तो अधिकतम तरंगें आती हैं। इसी
प्रकार जब खोज वेष्टन पूर्व पश्चिम वाली कोणमा

के अन्दर होती है तो अधिकतम तरंगें ग्रहण करती है। यदि तरंगें किसी अन्य दिशा से आ रही हैं तो कुछ कुछ दोनों वेष्टन पर प्रभाव डालेंगी और दोनों का पुनः खोज वेष्टन पर पड़ेगा। इसका फल वहीं इन दोनों वेष्टनों के मध्य में होगा। इस स्थान पर अधिकतम तरंगें ग्रहण होंगी परन्तु न्यूनतम को ज्ञात करने में आसानी रहती है इस कारण तीर खोज वेष्टन के समकोण पर लगा होता है। उसका अर्थ यह है कि जब न्यूनतम प्रभाव के स्थान पर खोज वेष्टन आ गई तो तीर के संकेत की दिशा से तरंगें आ रही हैं। इसका अर्थ यह है कि यदि तीर उत्तर की तरफ है तो तरंगें उत्तर तथा दक्षिण से आ रही हैं। यह अर्थ नहीं है कि उत्तर से आ रही हैं। इसको ज्ञात करने के हेतु दो अन्य खड़े एरियल प्रयोग में आते हैं। यह दोनों केवल दो खड़े तार ही होते हैं। परन्तु इनको एक चक्र पर घुमाया जा सकता है और जिस दिशा से तरंगें आ रही हैं दोनों को उसी रेखा में घुमाकर कर दिया जाता है। इनसे दो संकेत प्राप्त होते हैं तथा इनमें से दोनों की शक्ति देखकर ज्ञात हो जाता है कि कौनसा शक्तिशाली है। पास वाले एरियल से या दूर वाले एरियल से। इससे पता चल जाता है कि तरंगें उत्तर से या दक्षिण से आ रही हैं, इसके यंत्र पर चिन्ह होते हैं और केवल बटन दबाने की आवश्यकता रहती है पुनः यंत्र के चिन्हों को देखकर तत्काल ज्ञात हो जाता है कि किस दिशा से तरंगें आ रही हैं।

ऊपर बताया गया है कि जो तरंग किसी से टकराकर

आती है तो यह कैथोड़-रे-ट्यूब में एक छोटी सी रेखा बना देती है यह रेखा सीधी नहीं होती है परन्तु एक v के सदृश बनती है। यह नाक दीर्घतम होती है जब खोज वेष्टन आगन्तुक तरंगों के समानान्तर होती है तो यह लघुतम तब होनी है जब खोज वेष्टन तरंगों के समकोण पर रहती है। इस प्रकार जब खोज वेष्टन घुमाकर देख लिया कि नाक कहां पर नष्ट हो जाती है वही दिशा तीर बताता है कि वायुयान उत्तर से किस दिशा में है। इस प्रकार एक साथ ही दोनों बातें एक तो मीलों में दूरी कैथोड-रे-ट्यूब से तथा दूसरी दिशा दिशामापक यंत्र से उसी क्षण ज्ञात हो जाती हैं।

अब वायुयान की ऊंचाई पृथ्वी से देखना शेष रहा। इस को ज्ञात करने के हेतु भिन्न भिन्न ऊंचाई के दो खड़े एरियल होते हैं। इनसे विद्युत् तरंगें ग्राहक में लगाई जाती हैं यह एक अन्य यंत्र में से पास होती हैं जो विद्युत् तरंगों की शक्ति नाप देता है। इससे रेखा चित्र बना कर वायुयान की ऊंचाई तत्काल निकल आती है। परन्तु इनको अब यंत्रों से ज्ञात किया जाता है तो तत्काल ही ऊंचाई बता देता है। यह गणना ऊंचे उड़ने वाले वायुयानों पर तो सफलता पूर्वक कार्य करती है परन्तु जब वायुयान पृथ्वी के पास नीचे उड़ते हैं तो ठीक ऊंचाई नहीं ज्ञात होती है। इसके लिए राडार से अत्यन्त सूक्ष्म तरंगों की आवश्यकता पड़ी जिससे ठीक काम चल सका। यह सूक्ष्म तरंगें एक मुख्य वाल्व, जिसको मेगनेट्रोन कहते हैं उत्पन्न की जाती हैं जैसा कि *Oscillator* करता है। इससे निकली तरंगें दिशा एरियल से निकल कर एक प्रकाश की किरण के सदृश

बन जाती है और इसको आकाश में सब दिशाओं में घुमा फिरा सकते हैं जैसे सर्चलाइट फेंकी जाती है। इस प्रकार कहीं भी वायुयान क्यों न हो उसका ठीक पता चल जाता है।

इस प्रकार राडार किसी एक विशेष यंत्र का नाम नहीं है। इसमें कई यंत्र एक साथ कार्य करते रहते हैं और अपना अपना कार्य साथ पूरा करते हैं जिससे किसी दूर स्थित वस्तु की दूरी दिशा तथा उसकी पृथ्वी से ऊंचाई ज्ञात हो जाती है। ब्रिटेन ने इसका उपयोग जलयान चलाने तथा युद्ध के समय बम गिराने में किया था। दीर्घ विद्युत लहरों से आकाश का अधिक क्षेत्र बहुत दूरी तक देखा जा सकता है। जापानियों ने राडार इस प्रकार बनाये थे कि हवाबाज वायुयानों पर सीधे बम बरसाते थे। इसी की सहायता से प्रिन्स आफ वेल्स (Prince of Wales) जलयान को डुबा दिया था। जब किसी वायुयान के आने का पता लगाना है तो उसको सहज परिपथ को घुमा फिरा कर ट्यूनिंग (Tuning) करके कैथोड-रेन्ज-ट्यूब के चमकीले धब्बे पर देखते हैं तो उसका चिन्ह बन जाता है। जैसे जैसे वायुयान घूमता फिरता है इसी प्रकार परिपथ को भी घुमा फिरा कर राडार दृष्टि में रखा जाता है।

[illegible] लघु तरंगों के [illegible] करते हैं। इनका क्षेत्र [illegible]

सब क्षेत्रों में लाभप्रद नहीं साबित हुए और लघुतम तरंगों यानी सूक्ष्म तरंगों वाले राडार उपयोग आए। इनमें दिशा एरियल उपयोग किए गए तो इससे एक विशेष दिशा के संकुचित क्षेत्र में तरंगें भेजी जाती हैं। यह आकाश के अधिक क्षेत्र में नहीं छितरती है। इस से वायुयान की दिशा व दूरी अधिक शुद्ध रूप से ज्ञात हो जाती है। बड़े तथा छोटे दोनों यंत्र एक दूसरे के सहायक होते हैं। बड़ी तरंगों वाले यंत्र से वस्तु का विस्तृत रूप का पता लगाकर छोटे यंत्र से केन्द्रित करके वस्तु पर ठीक निशान विशेष लक्ष्य पर लगाया जा सकता है। जैसे किसी शहर को दीर्घ तरंगों से देख कर पुनः लघु तरंगों से किसी सैनिक केन्द्र पर लक्ष किया जा सकता है। पृथिवी के राडार स्टेशन प्रथम दीर्घ तरंगों से किसी शत्रु के शहर को राडार दृष्टि में लेते हैं। पुनः इसकी खबर रेडियो से वायुयान बम्बारों को देते हैं कि यह कहां पर स्थित है। अब वायुयान अपने लघु या सूक्ष्म तरंगों के यंत्र को चालू कर देता है और शहर के माल गोदाम पर या सैनिक केन्द्र पर राडार दृष्टि करता है पुनः उस पर गोलाबारी कर देता है तो लक्ष ठीक आता है।

प्रत्येक वायुयान तथा जलयान में 'राडार' ग्रहण तथा प्रसारक यंत्र होते हैं। जब कोई यान राडार क्षेत्र को आता हुआ ज्ञात पड़ता है तो वह उससे 'मित्र व शत्रु की पहिचान' का संकेत मांगते हैं। यह गुप्त भाषा में अपने ट्रांसमिटर से उत्तर दे देते हैं। यदि उत्तर का प्रतिसंकेत न भेजा या अशुद्ध भेजा तो

ज्ञात हो जाता है कि यान शत्रु दल का है। लड़ाकू वायुयानों में केवल लघु तथा सूक्ष्म यंत्र रहते हैं जो केवल ४-५ मील से काम कर सकते हैं। इस कारण जब शत्रु दल के पास आते हैं तो अपने यंत्र चला देते हैं इससे पूर्व उनको पृथ्वी पर के राडार से संकेत मिलते रहते हैं। इस प्रकार अपने घर वाले राडार का यह कार्य हो जाता है कि वह समस्त आकाश का ध्यान रखे तथा यह भी ज्ञान रखे कि कौन से मित्र तथा शत्रुयान हैं। यह प्रतिक्षण ज्ञात रहना आवश्यक है। इस प्रकार घर तथा मित्रयानों में सदैव संबंध राडार से रहता है और एक दूसरे को सचेत रखते हैं तथा पथ प्रदर्शन और राय देते रहते हैं। इस प्रकार रेडियो तरंगों को सर्चलाइट के सदृश आकाश में घुमाते फिरते रहते हैं जिससे कैथोड-रे-ट्यूब के चित्र पट पर प्रकाश विन्दु भी चलायमान रहता है और सब स्थान का चित्र बनता जाता है जिससे कहीं पर भी कोई यान हो तो पता चल जाता है तथा उसकी दूरी व दिशा चित्र पट के अंकों को देख कर ज्ञात की जाती है। यह सब कार्य एक ही साथ हो जाता है। यह चित्र पर इस प्रकार का बनाया जाता है कि एक स्थान का चित्र कुछ देर तक वहां पर प्रकाश विन्दु के हट जाने पर भी चमकता रहता है। अर्थ यह है कि चित्र पट पर प्रतिक्षण चित्र बना रहता है यहां की प्रत्येक वस्तु चित्र पट पर दिखाई देती है। जिस चिन्ह पर होती है उसकी दूरी व दिशा पढ़ली जाती है।

वायु यानों में कई राडार यंत्र रहते हैं। एक बगले

भाग में जो सामने के आकाश भाग का ध्यान रखता है तथा प्रति संकेत भी पूंछता है। दूसरा पूंछ में रहता है जो पीछे के भाग का ध्यान रखता है। एक अन्य उतरने वाले क्षेत्र का ध्यान कुहरे तथा बादलों में भी लक्ष्य को साफ दृष्टि में रखता है। कभी कभी छोटे-छोटे राडार यंत्र शत्रु क्षेत्र में छतरियों (Parachutes) से उतारे जाते हैं। जब लड़ाकू यान शत्रु क्षेत्र में जाते हैं तो इनसे संकेत मिल जाता है। फलतः अधिक ऊंचाई से ही बम्ब गिरा देते हैं तो ठीक लक्ष्य पर ही गिरते हैं।

अधिक छान बीन से पता चला कि अलमोनियम की छोटी छोटी चद्दरें भी इन रेडियो संकेतों को टकराकर लौटा देती हैं। इस प्रकार की १ फुट लम्बी तथा १ इंच चौड़ी ६००० चद्दरें मित्र दल ने फ्रांस के ऊपर वायुयानों से बरसाई थीं। इन्होंने जर्मन राडार को बेकार कर दिया था उनको यह पता नहीं लगा था कि किधर से हमला कर रहे हैं और कहां पर उतर रहे हैं। इस प्रकार इन परदों की आड़ से मित्र सेना फ्रांस में उतरी थी।

राडार यंत्र जलयानों पर भी होते हैं। यदि कोई जलयान संकट में हों और राडार संकेत न भेज सके तो अन्य खोजने वाले यान अपने राडार से इसकी दूरी व दिशा ज्ञात कर लेते हैं और सहायता का प्रबंध करते हैं।

पनडुब्बी में भी राडार होता है। इनको खोज करने वाले राडार वायुयानों में रहते हैं। यह वायुयान गश्त किया करते हैं

जो समुद्र के ऊपर फिरती रहती है। यह पहले कार्य के विपरीत रहता है, अर्थ यह है कि पहले तो पृथ्वी से आकाश में किरण फेंक कर वायुयानों का पता लगाया जाता था, किन्तु यहां पर आकाश में उड़ते वायुयान से किरण समुद्र पर फेंकते हैं। समुद्र इन तरंगों को पूर्णतया परावर्तित कर देता है, इनका लौटना विपरीत दिशा में होता है तथा रिसीवर में कोई प्रतिध्वनि (Echo) नहीं आती है। यदि कोई पनडुब्बी, जलयान या कोई अन्य वस्तु जैसे चट्टान हो तो प्रतिध्वनि आती है। इससे उस वस्तु की दिशा व दूरी ज्ञात कर लेते हैं और ठीक स्थान का पता लग जाता है।

सरलता रहेगी। भविष्य में रेलवे कन्ट्रोल आफिस में भीत
का उपयोग होगा। इसके द्वारा गाड़ियां तथा अन्य सं
राडार के नियंत्रण में रहेंगी, जिससे गाड़ियों के पटरी से
तथा लड़ने की संभावना न्यूनतम हो जावेगी। इसी प्रकार
में भी राडार नियंत्रण होगा तो लड़ना भिड़ना बन्द हो जा
राडार से तूफ़ान आने से अधिक पहले पता चल जाता है, जिस
रक्षा के उपाय किये जा सकते हैं।